ISSN-0971-8397

विकास को समर्पित मासिक

योजना

वर्ष : 50 • अंक : 11 फरवरी 2007 मूल्य : सात रुपये

नक्सलवाद

विकास और विक्षोभ

विकास को समर्पित मासिक

योजना

वार्षिक बजट देश की आर्थिक दिशा इंगित करता है
बजट को जानने के लिये पढ़ें

मार्च 2007 का

बजट 2007-08 विशेषांक

इसमें आप पाएंगे :

- **केंद्रीय बजट 2007-08 के विभिन्न पहलुओं पर रेखाचित्रों, तस्वीरों से युक्त गहन विश्लेषणात्मक आलेख।**
- **रेल बजट 2007-08 की गहरी पड़ताल।**
- **आर्थिक समीक्षा 2006-07 का विश्लेषण।**
- **प्रमुख अर्थशास्त्री तथा विशेषज्ञ इन विषयों पर अपने विचार प्रस्तुत करेंगे। अपनी प्रति सुरक्षित कराना न भूलें।**
- **इस विशेषांक का मूल्य 10/- रुपये है।**

चूंकि इस विशेषांक की छपाई संसद में केंद्रीय बजट 2007-08 पेश किए जाने (28 फरवरी, '07) के बाद होगा, इसलिये मार्च अंक आप तक विलंब से पहुंचेगा।

पाठक कृपया अपना आदेश स्थानीय एजेंट को दें अथवा विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पूर्वी खंड-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नयी दिल्ली-110066 (दूरभाष:26100207 फैक्स: 26175516) को संपर्क करें।

बिक्री तथा अन्य जानकारियों के लिये संपर्क करें:

प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पूर्वी खंड-IV रामकृष्ण पुरम, नयी दिल्ली-110001 (दूरभाष: 26105590, तार : सूचनाप्रकाशन * बिक्रीकेंद्र) * सूचना भवन, सीजीओ कॉम्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003 (दूरभाष: 23890205) * सी-701, केंद्रीय भवन, सीबीडी बेलापुर, नवी मुंबई-400 614 * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष: 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600070 (दूरभाष: 24917673) * प्रेस रोड, गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष: 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प कॉम्लेक्स, एमजे रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष: 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034 (दूरभाष: 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष: 2301823) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-8, अलीगंज, लखनऊ- 226024 (दूरभाष: 2325455) * अंबिका कॉम्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष: 26588669) * हाउस नं. 07, न्यू कालोनी, चेनी कुथ, केकेबी रोड, गुवाहाटी-781001 (दूरभाष: 2516792) * द्वारा/पीआईबी, मालवीय नगर, भोपाल-462003 (म. प्र.) (दूरभाष: 2556350) * द्वारा/पीआईबी, बी-7/बी, भवानी सिंह रोड, जयपुर-302001 (राजस्थान) (दूरभाष: 2384483)

पत्रिका स्थानीय समाचारपत्र विक्रेताओं से भी प्राप्त की जा सकती है

योजना

वर्ष : 50 अंक 11 फरवरी 2007 माघ-फाल्गुन, शक संवत 1928 कुल पृष्ठ : 56

प्रधान संपादक
अनुराग मिश्रा

कार्यकारी संपादक
राकेशरेणु

उप संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय
कमरा नं. 538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23096738, 23717910
23096666/2508, 2511
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : yojana@techpilgrim.com
www.publicationsdivision.nic.in
a) dpd@nic.in
b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजूमदार

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26100207, 26105590
फैक्स : 26175516

आवरण - सी.एच. पटेल

इस अंक में

संपादकीय		3
आंतरिक सुरक्षा : चुनौतियां	मनमोहन सिंह	6
अस्थिरता फैलाने वाली शक्तियों का मज़बूती से मुक़ाबला ज़रूरी	के.पी.एस. गिल	8
भारत में नक्सलवादी आंदोलन	प्रकाश सिंह	12
सही विकल्प की खोज	रजनीश	17
सच्चर समिति रिपोर्ट - एक मूल्यांकन	इम्तियाज़ अहमद	19
अल्पसंख्यकों के लिये बनी योजनाओं को तरजीह दी जाए	-	22
झरोखा जम्मू-कश्मीर का	-	23
मैट प्रभाव	-	27
घाटा एवं राजकोषीय अविवेक क्या है	-	28
अनुकरणीय पहल - दलित महिलाओं द्वारा संचालित सामुदायिक रेडियो	बी. बालाकृष्णन	30
दिल्ली में साइकिल रिक्शे	गौतम तिवारी	31
बिहार के कृषि श्रमिकों की समस्याएं	आनंद किशोर	33
1,58,310 करोड़ रुपये की ग्रामीण प्रगति योजना	-	36
स्थानीय विकास में सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाओं का सहयोग	प्रदीप कुमार	37
कानूनी संरक्षण के बावजूद महिलाओं की दयनीय स्थिति	रवि भूषण वर्मा	40
ख़बरों में	-	44
स्वास्थ्य चर्चा - अंधता: कारण और निवारण	हरनारायण महाराज	45
स्वास्थ्य चर्चा - त्रिदोष नाशक आंवला	प्रेमलता मौर्य	46
नये प्रकाशन - मानवाधिकारों पर गंभीर चर्चा	निर्भय कुमार	49
नये प्रकाशन - अथ संस्कृति जिज्ञासा	अंशु गुप्ता	51

योजना हिन्दी के अतिरिक्त **असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु** तथा **उर्दू** भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिये मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें :

व्यापार प्रबंधक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली-110 066 टेलीफोन : 26100207, 26105590

चंदे की दरें : वार्षिक : 70 रु. द्विवार्षिक : 135 रु.; त्रैवार्षिक : 190 रु.; विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश : 500 रु.; यूरोपीय एवं अन्य देश : 700 रु.

'योजना' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। जरूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिये 'योजना' उत्तरदायी नहीं है।

आपकी राय

बीते दिन याद आ गए

योजना का दिसंबर '06 अंक पढ़कर मुझे अपने पूर्वोत्तर प्रवास के दिन याद आ गए, जहां मैं स्वयं अपने परिवार के साथ खूबसूरत झील (पोखरी) के पास एक बांस से बने मकान में रहता था। इस अंक में रवींद्र कुमार चौधरी का आलेख 'पूर्वोत्तर में ग़रीबी उन्मूलन' पढ़ा। इसमें अपने विचारों को जोड़ना चाहूंगा कि पूर्वोत्तर में 'पर्यटन' की भी अपार संभावना है। कश्मीर की डल झील की तरह इंफाल की लोकताल झील देसी-विदेशी पर्यटकों को लुभा सकती है। कुटीर उद्योग-धंधे के क्षेत्र में पूरे पूर्वोत्तर, विशेषकर असम, मेघालय, मणिपुर में रेशम उत्पादन को एक मुख्य व्यवसाय के रूप में अपनाया जा सकता है। असम की मूंगा सिल्क सोने के भाव बिकती है किंतु संसाधनों के अभाव में उसका उत्पादन उतना नहीं हो पा रहा है जितनी आवश्यकता है। पूर्वोत्तर राज्यों की उत्तर-पश्चिमी राज्यों के समानांतर विकास की आवश्यकता है। इसके लिये वहां के स्थानीय लोगों व सरकार के मनोबल को प्रोत्साहन देना कहीं अधिक लाभकर होगा।

सत्यभान सारस्वत, देहरादून

विधि की जानकारी भी दें

मैं *योजना* का नियमित पाठक हूं। दिसंबर अंक में पूर्वोत्तर राज्यों के बारे में विशिष्ट जानकारी प्राप्त कर काफी प्रसन्नता हुई। इन राज्यों में विकास की असीम संभावना है, जिसका उचित कार्यान्वयन देश में एक सद्भावपूर्ण वातावरण के निर्माण में सहायक होगा। विधि का छात्र होने के कारण मेरा सोचना है कि इसमें केंद्र सरकार द्वारा निर्मित धनोपयोगी कानून तथा सर्वोच्च न्यायालय के महत्वपूर्ण फैसले को प्रकाशित कर विधिक जागरुकता में महत्वपूर्ण सहयोग किया जा सकता है। इससे हमारे देश की जनता के लिये बदलते दौर में अपने अधिकार, कर्तव्य एवं सरकार के सहयोग को एक साथ रोचक ढंग से दर्शाया जा सकेगा

शशि भूषण कुमार शांडिल्य
लखीसराय, बिहार

पूर्वोत्तर को समृद्ध बनाएं

मुझे आज भी याद है कि वर्ष 2002 के 'स्वतंत्रता दिवस विशेषांक' के साथ *योजना* का मेरी ज़िंदगी में प्रवेश हुआ जो आज तक बना है और उम्मीद है, आगे भी यह रिश्ता कायम रहेगा। इन साढ़े चार वर्षों में हमेशा की तरह *योजना* सार्थक व सारगर्भित जानकारियों से हम पाठकों को नहलाता रहा है। अपने नये स्तंभों - 'ख़बरों में' के जरिये हम प्रतियोगियों का समसामयिकता से रिश्ता जोड़े रखा; वहीं 'मंथन' ने मानसिक शुद्धीकरण के साथ-साथ आत्मविश्वास को अडिग बनाए रखने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

इस वर्ष के अंतिम अंक से स्पष्ट हुआ कि पूर्वोत्तर राज्यों के साथ शुरू से ही दोयम दर्ज़े का व्यवहार किया जाता रहा है।

'सेवन सिस्टर स्टेट्स' के नाम से प्रसिद्ध ये राज्य अरुण की वे सात रश्मियां हैं जिनकी प्रखरता और विस्तार से ही संपूर्ण भारत के विकास-पथ आलोकित होंगे और हम विश्व में अपना श्रेष्ठतम स्थान दीर्घकाल तक कायम रख सकेंगे।

कुमार दिवाकर, कचहरी हाता, पूर्णिया, बिहार

संसाधनों का समुचित दोहन आवश्यक

पूर्वोत्तर पर आधारित *योजना* का दिसंबर अंक अपने आप में पूर्वोत्तर राज्यों की एक महागाथा को सार रूप में समेटे हुए है।

सभी लेखकों एवं निबंधकारों ने पूर्वोत्तर से संबंधित बहुत ही खोजपूर्ण एवं प्रामाणिक तथ्य जुटाए हैं। कह सकते हैं कि पूर्वोत्तर के विकास के लिये सरकार प्रयास कर रही है। क्रियान्वयन एजेंसियों के और अधिक व्यावहारिक, निर्भीक एवं परिस्थितियों के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता है।

सबसे ज्यादा पीड़ादायी बात यह है कि पूर्वोत्तर क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों से भरपूर होते हुए भी आज तक इसके समुचित दोहन का कोई प्रयास नहीं हुआ, फलस्वरूप आज भी वहां के निवासी समुद्र में रहकर भी प्यासे के समान हैं।

संतुष्ट और समृद्ध लोग कभी आतंकवादी या अपराधी नहीं बनते। अत: सरकार एवं जनता दोनों को मिलकर हालातों का सामना करने के लिये दृढ़ संकल्पित होकर कार्य करना होगा।

रमेश जांगिड़, शिक्षक
हनुमानगढ़, राजस्थान

पूर्वोत्तर का समग्र विकास

दिसंबर का पूर्वोत्तर पर आधारित *योजना* का विशेष संस्करण प्राप्त हुआ। इसको पढ़ने के बाद बेशक यह कहा जा सकता है कि यह मासिक पूर्णरूप से विकास को समर्पित वह पत्रिका है जिसमें विकास संबंधी उन पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है जो मुख्यधारा से अछूते रह जाते हैं।

हाल ही में जब भारत और चीन के मध्य जुलाई के महीने में नाथू ला दर्रे को एक लंबे अंतराल के बाद व्यापारिक गतिविधियों के लिये खोला गया तो अचानक एक बार फिर से सभी का ध्यान उत्तर-पूर्व के राज्यों की ओर गया। हालांकि इस व्यापारिक रास्ते को प्रारंभ में कुछ निश्चित वस्तुओं के व्यापार के लिये ही खोला गया है लेकिन भारत-चीन के मध्य सुधरते आर्थिक रिश्ते को देखते हुए यह अनुमान लगाना सहज ही है कि निकट भविष्य में समय एवं वस्तुओं के सीमित दायरे को बढ़ाया जाएगा। इसका सीधा लाभ पूर्वोत्तर के निवासियों को होगा। क्योंकि इस मार्ग के खुल जाने से उस क्षेत्र में व्यापारिक गतिविधियां तेज हो जाएंगी। आशा है कि वहां रोज़गार के नये अवसर

भी सृजित होंगे।

वर्तमान में प्राकृतिक सौंदर्य एवं संसाधनों से परिपूर्ण इस क्षेत्र को लोग सुरक्षा की दृष्टि से काफी संवेदनशील मानते हैं। हालांकि सरकार इस ओर अनेक कदम उठा रही है लेकिन वे नाकाफी ही साबित हो रहे हैं। सरकार को ऐसी परिस्थिति में चाहिए कि वह आम जनता को साथ लेकर चले ताकि समस्याओं का निदान स्थानीय जनता की अपेक्षानुरूप हो सके।

तीसरी बात जो कि इस क्षेत्र के विकास के लिये काफी महत्वपूर्ण है, वह है इन क्षेत्रों से जुड़े पड़ोसी देशों के साथ स्वस्थ व्यापारिक संबंधों का निर्माण करना। इस संदर्भ में टी.पी. खाउन्द का लेख 'चौराहे पर पूर्वोत्तर : नयी दिशा की आवश्यकता' एवं चार्ल्स चेसी का लेख 'पूर्वोत्तर में विकास की राजनीति' काफी सारगर्भित एवं तथ्यपरक लगा।

नवंबर अंक काफी मर्मस्पर्शी लगा। *योजना* का यह अंक भारतवर्ष में न केवल बच्चों की दुर्दशा पर अपनी पैनी निगाह रखता है बल्कि भारत के आम नागरिकों को उनके उत्तरदायित्वों से भी अवगत कराने का भरसक प्रयास करता है। हाल ही में जारी अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन के रिपोर्ट के अनुसार वर्तमान में विश्व में कुल 246 करोड़ बाल श्रमिक हैं। यूनीसेफ के नवीनतम आंकड़ों के अनुसार भारत में कुल 35 करोड़ बाल श्रमिक हैं। यह संख्या किसी भी देश के लिये सर्वाधिक है। वहीं दूसरी ओर भारत सरकार के आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार यह संख्या 12 करोड़ है। यह दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक राष्ट्र के लिये बड़े ही शर्म की बात है। इसी परिप्रेक्ष्य में शांता सिन्हा द्वारा लिखित लेख 'ग़रीबों का शिक्षा के हक़ के लिये संघर्ष' में बाल श्रम के मौलिक कारण 'अशिक्षा' पर ज़ोर डाला गया है। उनके इन तर्कों से शायद अधिसंख्य लोग सहमत होंगे कि अगर शिक्षा का समुचित एवं उपयुक्त वितरण किया जाए तो बाल श्रम नामक अभिशाप को व्यक्त करने में हमें ज्यादा सहूलियत होगी। प्रांजल धर का लेख 'बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य' भी प्रशंसनीय है।

आज शिक्षा पर कुल राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद का लगभग तीन से साढ़े तीन फीसदी व्यय किया जाता है। इस राशि को बढ़ाने की बात विशेषज्ञों द्वारा लगातार की जाती रही है। वर्तमान परिदृश्य में इस ओर व्यापक ध्यान देने की आवश्यकता है। तभी हम बाल श्रम नामक अभिशाप से मुक्ति पा सकते हैं।

मनीष कुमार, पत्रकारिता (हिंदी विभाग)
दिल्ली विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली

प्रासंगिक है गांधीगीरी

योजना का नवंबर अंक बच्चों पर आधारित करने के लिये धन्यवाद। कम से कम साल में एक दिन तो बच्चों को समर्पित किया जाता है, जो *योजना* जैसी विश्वसनीय पत्रिका के लिये माध्यम बन जाता है। अंक के माध्यम से बच्चों की दशा और दिशा के बारे में तो जाना ही, भारत में बच्चों के भविष्य के बारे में भी विश्लेषण आसानी से किया जा सकता है। गांधीगीरी के माध्यम से लेख में भावी समस्याओं का हल शांतिपूर्वक करने का मार्ग बताया गया है जो गांधीजी की वर्तमान में प्रासंगिकता का द्योतक है। विनम्र निवेदन है कि गागर में सागर रूपी लेख 'ख़बरों में' को विस्तार दें।

मुहम्मद साजिद, फीरोजाबाद, उ.प्र.

बाल साहित्य पर लेख दें

गवेषणात्मक आलेखों से सुसज्जित *योजना* का नवंबर अंक आद्योपांत पढ़ा। निस्संदेह बच्चे न केवल इस देश में, बल्कि संपूर्ण विश्व में सर्वाधिक उपेक्षित हैं। उनके मनोभावों, आकांक्षाओं और आवश्यकताओं की दिशा में गंभीर प्रयास होने चाहिए।

अंक में बालकों के साहित्य पर भी कोई आलेख होना चाहिए था।

नागेश पांडेय 'संजय', शाहजहांपुर

चिराग तले अंधेरा

केंद्र सरकार ने एक और बढ़िया काम बाल मज़दूरी रोकने के लिये उचित कानून बनाकर किया है। 'चाइल्ड हेल्पलाइन 1098' के बारे में जानकारी हुई। इस समस्या की जड़ क्या है? जड़ है जनसंख्या वृद्धि। परिवार नियोजन के बिना सभी हेल्प लाइन बेकार हैं। अगर ये लाइन हैं भी तो क्या कमी नज़र आएगी। मैं उस दिन खुश हुआ जब सोनिया जी ने एनजीओ की निगरानी की बात की।

राजीव रंजन कुमार, सिकंदरपुर, जहानाबाद

अध्यापक नहीं मरते

योजना नवंबर का अंक बच्चों को समग्रता से समझने के लिये बहुत ही सार्थक दस्तावेज़ बन पड़ा है। चाहे वह 'बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य' शीर्षक लेख हो या फिर 'ग्रामीण बच्चों के लिये कठिन दौर' शीर्षक लेख। जितनी गहराई से ये बच्चों की दुनिया के जद्दोजहद को उजागर करते हैं वह सचमुच काबिलेतारीफ है। हर लेख अपनी विशिष्ट शैली, विषय, तर्कों की प्रस्तुति की दृष्टि से खास है। मीडिया (फिल्म) किस प्रकार बच्चों की दुनिया को समझने, समझाने में मदद कर सकता है, बल्कि किया है इस पर केंद्रित 'बच्चों के विकास में बाल फिल्मों की भूमिका' लेख पठनीय बन पड़ी है। गहरे उतरने, मंथन करने के लिये उकसाता यह अंक हम युवा चेता नवयुवकों के लिये महत्वपूर्ण है।

रंजय प्रताप सिंह, विजय नगर, दिल्ली

जनजागरूकता से ही बाल कल्याण संभव

मैं *योजना* का पांच वर्षों से नियमित पाठक रहा हूं। हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी बच्चों पर केंद्रित अंक के तमाम आलेख काफी रोचक एवं अच्छे लगे। आलेख को पढ़ने के बाद ऐसा लगा मानो पूरा भारतवर्ष इस दुख व विरोधाभासों में जीता हो कि बाल मज़दूरी एवं बाल मज़बूरी का समाधान कब होगा। हम अपने बुजुर्गों से सुनते हैं कि प्राय: हर भाषा, संस्कृति और देश में ऐसा कहा जाता है कि बच्चे राष्ट्र के भावी कर्णधार होते हैं। आज के बच्चों में हम आने वाले कल को देख सकते हैं। परंतु जिस राष्ट्र के बच्चों का वर्तमान ही अंधकार में डूबा हो और भविष्य उजाले की तलाश में भटक रहा हो, हम उस देश के अच्छे भविष्य की कल्पना कैसे कर सकते हैं? इसलिये राष्ट्र के कर्णधारों के लिये विभिन्न लेखकों द्वारा सुझाए गए सुझाव को भारतवर्ष के प्रत्येक नागरिक को अपने दिल और दिमाग में लाना होगा, तभी हमारे देश के कर्णधारों का कल्याण होगा। असंगठित क्षेत्रों में बच्चों का संरक्षण किया जाए एवं बाल श्रम के विरोध में जनजागरूकता पैदा की जाए। इसके लिये समाचार, दूरदर्शन आदि संचार साधनों का प्रयोग किया जाए।

सुजीत कुमार
आर.एम.एस. कालेज, भागलपुर, बिहार

उदारीकरण मीठा ज़हर

आज संपूर्ण विश्व में उदारीकरण ने संसार की तस्वीर बदल दी है। भारत सरकार भी अपने सार्वजनिक उपक्रमों से पूंजी हटा रही है। कुछ तो बेच भी दिए। मारुति के सभी अंशों को बेचने

की घोषणा भी कर दी गई है। यदि सरकार को कोई उपक्रम लाभ दे रहा है, तो उसको बेचना क्यों ज़रूरी है? वह भविष्य में हमारी सरकार के लिये संकटमोचन के रूप में कार्य कर सकता है। लेकिन उदारीकरण के भंवर में हम भी फंस गए हैं। एक विकासशील अर्थव्यवस्था को प्रत्येक कदम संभाल कर रखना चाहिए।

देवराज छीतरसिंह, गांधी विहार, दिल्ली

शिक्षक केवल शिक्षण कार्य ही करें

मैं पिछले पांच वर्षों से *योजना* का नियमित पाठक हूं। इसमें प्रकाशित हर सामग्री अतुलनीय और लाजबाव होती है।

नवंबर अंक में 'बाल विकास' पर प्रकाशित सामग्री ने देश के भविष्य निर्माण के लिये नयी पीढ़ी के प्रति सरकार और शिक्षकगण की जबावदेही तय करने की एक रूपरेखा प्रस्तुत की है। इस अंक में प्रकाशित लेख 'आईसीडीएस - बाल विकास के प्रति भारत की वचनबद्धता', कृष्ण कुमार द्वारा लिखित 'ग्रामीण बच्चों के लिये कठिन दौर' तथा कौशलेंद्र प्रपन्न द्वारा लिखित 'शिक्षण के प्रति उदासीन अध्यापक' लेख अत्यंत सराहनीय एवं विचारणीय हैं। यहां पर मैं यह कहना चाहता हूं कि अध्यापक एक ऐसा सृजनकर्ता है जो प्राथमिक स्तर पर बच्चों के जीवन की पहली ईंट, उनके भविष्य की इमारत में नींव के रूप में जोड़ता है, परंतु प्रशासकीय लचर व्यवस्था और अत्यंत कम मानदेय के चलते अध्यापकगण अपना पूर्ण समय शिक्षण कार्यों के प्रति समर्पित करने में असमर्थ रहते हैं। आज ज़रूरत इस बात की है कि शिक्षकों को उचित मानदेय प्रदान किया जाए और उन्हें सिर्फ शिक्षण कार्यों के प्रति समर्पित रहने दिया जाए।

पुष्पराज सिंह, रीवा, म.प्र.

सरकार क्या कर रही है?

नवंबर अंक पाकर अपार हर्ष हुआ। लेकिन आज जिस तरह से असंगठित क्षेत्रों में बच्चों का शोषण हो रहा है उससे यह पता चलता है कि हमारी सरकार बच्चों के कल्याण के प्रति कितना सचेत है। बच्चों को कम उम्र में ही नौकरी का लालच देकर घरों में काम करवाया जाता है। जब यही बच्चे बड़े हो जाते हैं तो वापस उनको अपने घर भेज दिया जाता है जिससे उन बच्चों की ज़िंदगी बरबाद हो जाती है और वे किसी काम के लायक नहीं रह जाते हैं। मैं यह जानना चाहता हूं कि सरकार उनके खिलाफ क्या कार्रवाई कर रही है, जो ऐसा घिनौना काम करते हैं। आर्थिक रूप से मज़बूत लोग या अच्छी सरकारी नौकरी करने वाले लोग ही अपने घरों में बच्चों को नौकर रखते हैं। शांता सिन्हा का लेख 'ग़रीबों का शिक्षा के हक़ के लिये संघर्ष' पढ़कर अच्छा लगा।

संतोष पाल, लोहंगपुर, उ.प्र.

बच्चों की अनदेखी क्यों

बच्चों पर केंद्रित नवंबर अंक के तमाम आलेख काफी अच्छे लगे। अंक पढ़ने के बाद ऐसा लगा मानो समस्त भारत विडंबनाओं व विरोधाभाषों में जीता हो। आज के बदनसीब बच्चों की बदौलत कल की बेहतरी की कामना आखिर हम कैसे कर सकते हैं? ऐसा माना जाता है कि यदि राष्ट्र को सर्वाधिक बचत करना है तो वह बच्चों में निवेश करें, लेकिन इस परिसंपत्ति की इतनी अनदेखी क्यों? क्यों नहीं बजट का एक अंश उनके लिये सुरक्षित हो पाता है? आज हम सर्वशिक्षा अभियान की सफलता का सपना देख रहे हैं, लेकिन हक़ीक़त क्या है। 42,000 विद्यालय भवनहीन हैं तथा लाखों विद्यालय में सिर्फ एक कमरा की व्यवस्था है, ऐसी विकट परिस्थिति में शैक्षिक वातावरण सुदृढ़ करना आसान काम है क्या? भेड़-बकरी की तरह बच्चे होते जा रहे हैं, कितने ही बच्चों को भर पेट भोजन भी नहीं मिल पा रहा है, क्या यह सरकार की जिम्मेवारी नहीं है। शिक्षा व स्वास्थ्य सेवा से वंचित लाखों बच्चों की इस दशा को उनके मौलिक अधिकारों का हनन नहीं माना जाए।

मिथिलेश कुमार, भागलपुर, बिहार

प्रेरणा स्रोत

योजना का नवंबर अंक देखकर चित्त गद्गद हो गया। संपादकीय गागर में सागर जैसी लगी। बाल विकास पर अनूठी सामग्री के लिये साधुवाद। अर्चना बिंदुसार, निर्मला लक्ष्मणन, कौशलेन्द्र प्रपन्न, शांता सिंह के आलेख उत्कृष्ट हैं। कागज़, मुद्रण और सफल संपादन की दृष्टि से यह शासन स्तर के बावजूद प्रेरणास्रोत ही है। मंथन तथा नये प्रकाशन का कॉलम बहुत ही अच्छा लगा। शिक्षण के प्रति उदासीन अध्यापक में वर्तमान संदर्भ के लिये संजीवनी है। सामग्री पठनीय तथा संग्रहणीय है। पत्रिका अद्वितीय बनकर पूरे देश में छाई रहे यही हृदय से मंगल कामना है।

हरिप्रसाद दुबे, फैजाबाद, उ.प्र.

लेखकों से अनुरोध

कृपया अपने लेख टाइप करा कर सीडी में भेजें। साथ में एक मूल टंकित प्रति हो। वापसी के लिये टिकट लगा लिफाफा अवश्य संलग्न करें। डाक टिकट लगा लिफाफा संलग्न न होने पर अस्वीकृति की दशा में रचनाएं वापस भेजना संभव नहीं होगा। लेख पर दो से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर ही दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार न करें। विशेष अवसरों के लिये लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासंगिक चित्र भी भेजें। सभी रचनाएं 'संपादक, योजना' के नाम प्रेषित करें।

- संपादक

संपादकीय

सरकार ने अब यह स्वीकार कर लिया है कि नक्सलवाद से प्रभावित देश के 160 जिलों के कुछ हिस्से 'मुक्त क्षेत्र' सरीखे बन गये हैं और वहां प्रशासन और पुलिस व्यवस्था जैसे राज्य के कामों को नक्सलवादी अंजाम देने लगे हैं। नक्सलवाद अब तक का देश का अकेला सबसे बड़ा आंतरिक सुरक्षा चुनौती का कारण बन गया है।

देश के 13 राज्य नक्सलवाद से प्रभावित हैं। इनमें से छत्तीसगढ़, झारखंड, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र के कुछ हिस्सों में यह आंदोलन अधिक तीव्र है जबकि केरल, कर्नाटक, तमिलनाडु, उत्तरांचल और हरियाणा में भी यह अपनी ज़मीन तैयार कर रहा है। नक्सली दलों और उनकी आक्रमण शैली निरंतर पेशेवराना होती जा रही है।

यूपीए के राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में कहा गया है कि केंद्र सरकार नक्सली हिंसा को कानून-व्यवस्था की समस्या नहीं मानती। इसे सामाजिक-आर्थिक समस्या के रूप में सुलझाने की जरूरत है। जब तक आर्थिक असमताएं दूर नहीं होंगी, नक्सलवादी आंतरिक शांति भंग करते रहेंगे और अस्थिरता पैदा करते रहेंगे। अध्ययनों से पता चलता है कि देश के निर्धनतम लोग नेपाल से सटे बिहार की सीमा से लेकर आंध्र प्रदेश के रायलसीमा तक की नक्सलवाद प्रभावित पट्टी में संकेंद्रित हैं। जब तक उनकी शिकायतों का त्वरित निबटान नहीं हो जाता, उनका असंतोष और आक्रोश नक्सलवादियों को ऊर्जा प्रदान करता रहेगा। नक्सलवाद के सामाजिक-आर्थिक कारणों से निबटने की कुंजी सुशासन और विकास कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन में निहित है।

इस आंदोलन की प्रकृति और शैली में आ रहे परिवर्तनों की पहचान करना होगा। उनका सैन्यीकरण बढ़ रहा है और वे उन्नत सैन्य संगठन में तब्दील हो रहे हैं। इसलिये स्थानीय पुलिस व्यवस्था और खुफिया तंत्र को मजबूत बनाना जरूरी हो गया है। इसके लिये नक्सल प्रभावित जिलों में सक्षम अधिकारियों की तैनाती तथा उन्हें स्थिरता प्रदान करना आवश्यक है। आंध्र प्रदेश के 'ग्रे हाउंड्स' को अन्य प्रभावित राज्यों के लिये नमूने के तौर पर पेश किया जा सकता है। स्थानीय लोगों का विश्वास जीतना एक दूसरा महत्वपूर्ण पहलू है। केंद्र द्वारा बुलाई गई प्रभावित राज्यों की अनेक बैठकों में यह बात उभर कर सामने आई है कि नक्सली आंदोलन के खिलाफ़ चलाए गए अभियानों के दौरान प्राय: केंद्र और राज्य खुफिया एजेंसियों के बीच समन्वय की कमी पाई जाती है जिससे अभियान पर बुरा असर पड़ता है। इन बैठकों का सकारात्मक परिणाम यह हुआ है कि केंद्र ने यह स्पष्ट कर दिया है कि वह विभिन्न राज्यों की प्रतिरोधी रणनीतियों के क्रियान्वयन की निगरानी करेगी। अब तक केंद्र सरकार की भूमिका अर्धसैनिक बलों को भेजने, राज्यों को सुरक्षा संबंधी व्यय का भुगतान करने तथा पुलिस तंत्र के आधुनिकीकरण तक सीमित थी।

नक्सलवाद प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि "नक्सली समस्या से निबटने की हमारी रणनीति के दो पाये होंगे - पहला प्रभावी पुलिस प्रतिक्रिया सुनिश्चित करना और साथ ही साथ दूसरा, वंचना और अलगाव के बोध को कम करना।" प्रधानमंत्री ने रेखांकित किया कि "पुलिस अनुक्रिया आवश्यक है क्योंकि सार्वजनिक व्यवस्था कायम रखने के राष्ट्रीय दायित्व के लिये यह जरूरी है। लेकिन प्रभावी पुलिस अनुक्रिया का अभिप्राय भारतीय शासन व्यवस्था को क्रूर बनाना नहीं है।" समय आ गया है कि प्रधानमंत्री के शब्दों को अमली जामा पहनाया जाए ताकि नक्सलवाद के प्रसार को रोका जा सके और प्रभावित इलाकों में त्वरित गति से आर्थिक विकास के लाभ पहुंचाए जा सकें। ❑

आंतरिक सुरक्षा : चुनौतियां

❍ मनमोहन सिंह

अल्पसंख्यक बिरादरी की शिकायत को दूर करना हम सब की जिम्मेदारी है। सभी मुख्यमंत्रियों को सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया में अल्पसंख्यकों की समुचित भागीदारी सुनिश्चित करने में व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना चाहिए। आतंकवाद का सामना करते समय नागरिकों, विशेषकर अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों का आदर करना प्रशासनिक विभागों की चिंता एक अहम विषय होना चाहिए

आज की सबसे अहम चिंता आंतरिक सुरक्षा है। केंद्र एवं राज्यों को मिलकर संयुक्त रूप से इस समस्या का समाधान खोजना चाहिए।

देश आंतरिक सुरक्षा की जटिल समस्याओं एवं ख़तरों के एक वृहद युग्म से रू-ब-रू है। इनमें से प्रत्येक के साथ अलग-अलग तरीकों से निपटने की ज़रूरत है। यही नहीं, इसके लिये केंद्र और राज्यों के बीच नज़दीकी सहयोग की आवश्यकता है क्योंकि ये समस्याएं अब किसी राज्य विशेष तक ही सीमित नहीं रहीं वरन विभिन्न राज्यों को अपनी चपेट में ले लिया है। हमारी जैसी संघीय व्यवस्था में, जहां विधि व्यवस्था राज्य का विषय है, समन्वित रूप से कार्य करना आसान नहीं है। फिर भी, हमें इस स्थिति से निपटने के रास्ते व तरीके खोजने होंगे और अतीत के कुछ कार्यकलापों पर पुनर्विचार करना होगा।

आंतरिक परिस्थितियां

परिस्थिति को बेहतर बनाने के लिये क्षमता-निर्माण एवं आसन्न एवं भविष्य की समस्याओं से निपटने के राज्यों के सामर्थ्य के विकास पर ज़ोर देना होगा। राज्य स्तर पर क्षमता-निर्माण ज्यादा अहम है। और, इस दिशा में किसी भी किस्म की आर्थिक बाधा आने पर केंद्र आवश्यक सहायता प्रदान करने को तैयार है। हालांकि, हमारी समझ यह है कि राज्यों द्वारा पुलिस व विधि व्यवस्था से जुड़ी अन्य एजेंसियों की रिक्तियों को भरने या विशेष शाखाओं की गुणवत्ता के विकास या विधि-व्यवस्था से जुड़े प्रशासन को सुदृढ़ करने की दिशा में पर्याप्त कार्य नहीं किया जा रहा है। कारगर विधि व्यवस्था के बगैर आर्थिक विकास संभव नहीं है।

शांति व्यवस्था बनाए रखने के लिये सॉफ्टवेयर के विकास पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इसका अर्थ यह है कि खुफिया जानकारियों के संग्रहण व संकलन को बेहतर बनाने के साथ-साथ संपूर्ण खुफिया व्यवस्था को भी मज़बूत बनाने की ज़रूरत है। विश्लेषणात्मक क्षमता में वृद्धि करने की आवश्यकता है। उचित मानकों को निर्धारित करना भी आवश्यक है जिसके आधार पर प्रगति व प्रदर्शन का आकलन किया जा सके।

आंतरिक सुरक्षा के विषय

बैठक मुख्य रूप से वामपंथी उग्रवाद, आतंकवाद एवं अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुसलमानों में व्याप्त असुरक्षा की भावना को दूर करने पर केंद्रित है। पूर्वोत्तर राज्यों एवं जम्मू-कश्मीर की घटनाओं की भी समीक्षा ज़रूरी है।

पूर्वोत्तर राज्यों तथा जम्मू-कश्मीर के मुख्यमंत्रियों को एक बुनियादी वास्तविकता को ध्यान में रखना चाहिए कि सीमावर्ती राज्यों एवं समुदायों के साथ व्यवहार करते समय हमें प्रत्येक परिस्थिति की रंगत तथा क्षेत्रीय व जनजातीय मांगों के स्वरूपों के प्रति विशेष रूप से संवेदनशील रहने की ज़रूरत है। क्योंकि, यदि समय रहते इनका पूर्वानुमान व समाधान नहीं किया गया तो इनकी परिणति पूर्णकालिक आतंकवाद के रूप में हो सकती है। पूर्वोत्तर क्षेत्र में मणिपुर तथा नगालैंड सरीखे राज्यों की स्थिति आज विशेष रूप से नाजुक है और हमारे विशेष ध्यान की आवश्यकता है। ऐसे में, राष्ट्रीय सोच एवं ज़रूरतों के ऊपर व्यक्तिगत अभिरुचियों को तरजीह देने की बेहद कम गुंजाइश है।

जम्मू-कश्मीर के मामले में भी बिल्कुल यही कहा जा सकता है। यद्यपि पिछले दो वर्षों के दौरान वहां की स्थितियों में सुधार के संकेत मिले हैं, हमें भारत-विरोधी तथा देशद्रोही तत्त्वों द्वारा भावनाओं को भड़काने और इन्हें हिंसक आंदोलन में तब्दील करने के सतत प्रयासों के प्रति सतर्क रहना चाहिए।

नक्सलवादी आंदोलन

नक्सलवादी समस्या के प्रति एक ऐसे मिश्रित रवैये की आवश्यकता है जिसमें नक्सलवादी हिंसा से दृढ़तापूर्वक, लेकिन परिष्कृत तरीके से निपटने के साथ-साथ विकासात्मक पहलुओं पर संवेदनशील दृष्टिकोण का समावेश हो। वामपंथी

उग्रवादियों के प्रभाव वाले इलाके देश के सर्वाधिक उपेक्षित इलाके हैं। ये नक्सली संगठनों के लिये भर्ती के मुख्य क्षेत्र भी हैं। आज जहां छत्तीसगढ़, झारखंड, बिहार, उड़ीसा एवं आंध्र प्रदेश नक्सली गतिविधियों के मामले में अग्रणी हैं, कई अन्य दूसरे राज्य भी इस दृष्टि से असुरक्षित हैं। कारगर विधि-व्यवस्था के माध्यम से नक्सली हिंसा से निपटने समेत सभी संभावित उपायों के निर्धारण का काम मुख्यमंत्रियों को व्यक्तिगत रूप से अपने हाथों में लेना चाहिए।

नक्सली हिंसा से निपटने की असली कुंजी 'अच्छी' खुफिया व्यवस्था है। इसमें थाना स्तर पर उपलब्ध प्रभावी ज़मीनी सूचनाओं का सामरिक एवं रणनीतिक दृष्टिकोण से कारगर समन्वय शामिल है। नक्सली वारदातों के समय सबसे पहले पुलिस ही सक्रिय होती है और यह नक्सली गतिविधियों से निपटने के संपूर्ण प्रयासों में एक अहम कड़ी है। इसलिये, पुलिस को संवेदनशील बनाना बेहद ज़रूरी है।

सुरक्षा बलों को नक्सलियों के विरुद्ध कार्रवाई से संबंधित विशेष प्रशिक्षण देने की भी ज़रूरत है। आंध्र प्रदेश में नक्सल विरोधी कार्रवाईयों से संबंधित प्रशिक्षण की बेहतरीन व्यवस्था है।

नक्सली आंदोलन के प्रसार पर करीबी नज़र रखने के उद्देश्य से गृहमंत्री की अध्यक्षता में मंत्रियों के एक उच्चाधिकार प्राप्त समूह का गठन किया गया है जिसमें चुनिंदा मुख्यमंत्रियों को भी शामिल किया गया है। इस समूह की समय-समय पर बैठकें होंगी और इसमें आवश्यक कदमों, सहायता के स्वरूपों तथा राज्यों के बीच कर्मचारियों के आदान-प्रदान पर विचार-विमर्श होगा।

आतंकवाद

सीमा पार से प्रायोजित एवं निर्देशित आतंकवादी संगठनों की देश में बढ़ती गतिविधियों पर चिंता जायज़ है। खुफिया एजेंसियों ने हिंसक वारदातों में बढ़ोतरी की चेतावनी देते हुए बताया है कि फिदायिन हमले, आत्मघाती हमले, आर्थिक एवं धार्मिक स्थलों पर हमले, आण्विक केंद्रों व सैनिक शिविरों समेत महत्वपूर्ण ठिकानों पर हमले की घटनाएं और अधिक हो सकती हैं। रिपोर्टों में इस तथ्य का भी उल्लेख है कि कुछ शहरी क्षेत्रों में आतंकवादियों के नेटवर्क एवं 'स्लीपर सेल' मौजूद हैं। इससे स्थिति की गंभीरता का पता चलता है।

ये गंभीर मामले हैं और हमें इन विकेंद्रित सूक्ष्म आतंकवादी संगठनों से निपटने के तौर-तरीके अवश्य ढूंढ़ने होंगे। इससे राज्य एवं स्थानीय खुफ़िया एजेंसियों के साथ-साथ पुलिस के लिये भी अधिक सतर्कता बरतना अनिवार्य होगा। आतंकवाद विरोधी हमारी रणनीति में बीट के सिपाही को शामिल किए बगैर भविष्य के हमलों को समय रहते नेस्तनाबूद करने की हमारी क्षमता पूरी तरह से सीमित रहेगी।

आतंकवाद के खिलाफ जंग में जनता की इच्छाशक्ति की अहम भूमिका होगी। इस लड़ाई में जनता को अपना संवेदनशील सहयोगी बनाने के लिये हमें एक बड़ा प्रयास करना होगा और उनमें से कुछ लोगों को आतंकवाद विरोधी एक ऐसा 'वार्डन' बनने के लिये तैयार करना होगा जो किसी भी असामान्य गतिविधि की सूचना हमें दें। इसी प्रकार, मीडिया का सहयोग लेकर उन्हें और अधिक सकारात्मक भूमिका निभाने के लिये राजी करना उपयोगी होगा। इसके लिये एक संपूर्ण मीडिया-प्रबंधन रणनीति की आवश्यकता होगी। हालांकि, यह सब आपकी व्यक्तिगत सहभागिता और मार्गदर्शन के बगैर संभव नहीं है।

मुसलमानों में असुरक्षा की भावना

अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुसलमानों में व्याप्त असुरक्षा की भावना का हमारी राजनीतिक व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है। यह सब की जिम्मेदारी है कि ऐसा नहीं हो। यह बेहद ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी आबादी के एक तबके में उपजे आतंकवाद के लिये समूचे मुस्लिम समुदाय को निशाना बनाया जा रहा है, और इस समुदाय की गलत छवि बनाते हुए उन्हें कट्टरवादी बताया जा रहा है। इसलिये, हमें तत्काल ऐसे कदम उठाने की ज़रूरत है जिससे चंद व्यक्तिगत घटनाओं के लिये समूचे समुदाय की छवि को बिगड़ने से रोकना सुनिश्चित हो सके। साथ ही, अल्पसंख्यकों के जेहन से अलगाव एवं अभियोग की भावना मिटाई जा सके।

सभी धर्मों में 'पवित्र मूल्य' हैं। हमें उन 'पवित्र मूल्यों' को उजागर करना चाहिए जो सभी धर्मों में समान रूप से मौजूद हैं। हमें 'सभ्यताओं के संघर्ष' सरीखे कलुषित दर्शनों एवं विचारों के विरुद्ध अभियान छेड़ना चाहिए। हमें 'सभ्यताओं के समागम' के विचार का प्रसार करना चाहिए। 'पवित्र मूल्य' प्रकृति के उत्कृष्ट आदर्श हैं। हमें सभी समुदायों के धीर-गंभीर लोगों को आमजन में प्रचार-प्रसार की खातिर 'पवित्र मूल्यों' की सही व्याख्या के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए। इस समन्वित दृष्टिकोण को आगे बढ़ाने के लिये शिक्षा एवं जनसंचार माध्यमों को भी सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करना चाहिए।

हमें इस तथ्य पर अवश्य ही गौर करना चाहिए कि हमारे देश के बड़े हिस्से में मुसलमानों को यह शिकायत है कि उन्हें सामाजिक एवं आर्थिक विकास की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदार नहीं बनाया गया और सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लाभों से वंचित रखा गया। हमारे अल्पसंख्यक बिरादरी की इस वाजिब शिकायत को दूर करना हम सब की जिम्मेदारी है। सभी मुख्यमंत्रियों को सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया में अल्पसंख्यकों की समुचित भागीदारी सुनिश्चित करने में व्यक्गित रूप से ध्यान देना चाहिए। आतंकवाद का सामना करते समय नागरिकों, विशेषकर अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकारों का आदर करना प्रशासनिक विभागों की चिंता का एक अहम विषय होना चाहिए। आतंकवाद के विरुद्ध हमारे संघर्ष में किसी निर्दोष व्यक्ति को तंग नहीं किया जाना चाहिए। यदि कोई गलती हो भी जाए तो समय रहते उसका परिमार्जन कर लिया जाना चाहिए। सरकारी एजेंसियों, विशेषकर कानून लागू कराने वाली एजेंसियों को समुदाय के नेताओं के साथ आत्मीय संबंध रखने चाहिए और उनकी चिंताओं पर समुचित संवेदनशीलता दिखानी चाहिए। सभी मुख्यमंत्रियों को इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये कारगर व्यवस्था करनी चाहिए। ❑

(आंतरिक सुरक्षा से संबंधित मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में प्रधानमंत्री के उद्घाटन भाषण पर आधारित)

अस्थिरता फैलाने वाली शक्तियों का मज़बूती से मुक़ाबला ज़रूरी

○ के.पी.एस. गिल

न केवल मौजूदा दौर में बल्कि आगत भविष्य में भी भारत की सुरक्षा व्यवस्था संबंधी सर्वाधिक बड़ी चुनौतियां अंदरूनी हैं। चूंकि पड़ोसी देश लगातार भारत की अंदरूनी समस्याओं का फायदा उठा कर अपनी रोटी सेंकने की फिराक़ में रहते हैं इसलिये इनके तार विदेशों से भी जुड़ते हैं। इस ख़तरे का सबसे ख़राब स्वरूप आतंकवाद तथा अंशत: पारंपरिक युद्धशैली में नज़र आता है। समय के साथ-साथ हम पाते हैं कि आतंकवादी रणनीतियों, प्रविधियों तथा तकनीकों तक उनकी पहुंच सिलसिलेवार रूप से उनके आक्रमणों की मारक और विध्वंसक क्षमता को बढ़ाती जाती है। इसके साथ ही पाकिस्तान और बांग्लादेश के द्वारा सरकारी स्तर पर आतंकवादी समूहों को मदद के प्रमाण भी बढ़ते जा रहे हैं। प्रत्येक नयी आतंकवादी घटना, खासकर भारत के नगरों में घटित होने वाली घटना के बाद विश्लेषणों और राजनीतिक तेवरों का दौर शुरू हो जाता है। ज्यों-ज्यों आतंकवादी घटनाएं बढ़ती जा रही हैं, ऐसी हरेक बड़ी दुर्घटना के बाद यह उम्मीद पैदा होती है कि इस बार कुछ बदलाव आएगा; सरकार कुछ ऐसे नवीन उपायों और नीतियों की घोषणा करेगी जिनसे आतंकवाद के अभिशाप से प्रभावशाली रूप से निबटने की राष्ट्रीय शक्ति और क्षमता तैयार होगी। लेकिन जल्दी ही उस घटना को भुला दिया जाता है। विगत दशकों में आतंकवाद पर राष्ट्रीय प्रतिक्रिया की बुनियादी संरचना में शायद ही कोई द्रष्टव्य परिवर्तन आया हो।

आतंकवाद पर राष्ट्रीय बहस में अनेक निरर्थक चीजें नज़र आती हैं। दुनियाभर के अन्य सभ्य देशों और समाजों में आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई को एक विश्वास की चीज बना लिया गया है। राजनीतिक तंत्र छोटे-छोटे और भेदभाव वाली राजनीति से ऊपर उठकर अपने निजी और राजनीतिक लाभों को त्यागकर निर्दोष और कमजोर लोगों के भविष्य को प्राथमिकता देते हैं। इन समाजों के बुद्धिजीवियों और प्रशासकों ने, जिनमें न्यायिक प्रशासक भी शामिल हैं, जनतांत्रिक मूल्यों के प्रति समर्पित रहते हुए भी आतंकवाद से सभ्यता को मिलने वाली चुनौतियों और भारी ख़तरे को स्वीकार किया है। इसीलिये उन्होंने कार्यकारिणी, खुफिया तंत्र और कानून-व्यवस्था लागू करने वाली एजेंसियों को इस चुनौती से निबटने के लिये समुचित रूप से सशक्त किया है।

भारत में शासक तथा बुद्धिजीवी वर्ग निकट भविष्य में ऐसी कोई व्यवस्था करेंगे, इसकी संभावना बड़ी क्षीण है। आतंकवादी घटनाओं की निरंतरता और व्यापकता के बावजूद आतंकवाद को लेकर भारत का राजनीतिक दृष्टिकोण और कार्यक्रम बेहद दिग्भ्रमित, नासमझीभरा और समझ से परे है। दुर्भाग्यपूर्ण रूप से भारत का राजनीतिक तबका प्राय: राष्ट्रीय हितों की अनदेखी करते हुए हरेक चीज से राजनीतिक लाभ लेना चाहता है। यह प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है। लेकिन आतंकवाद तथा आतंकवाद विरोधी नीति के मुद्दे पर दलीय सोच से ऊपर उठकर सर्वसम्मति आवश्यक है। आतंकवाद एक ऐसी समस्या है जो हमारे साथ विगत अनेक वर्षों की तरह आने वाले अनेक वर्षों में भी बनी रहेगी। इसलिये बारी-बारी से अपना सिर रेत में गोंत लेने अथवा विक्षिप्ततापूर्ण प्रतिक्रिया व्यक्त करने से सरकारी तंत्र में लोगों का विश्वास कम होगा। पश्चिमी जनतांत्रिक देशों ने अपनी ज़मीन पर आतंकवाद की मौजूदगी का पहला संकेत मिलते ही भावी कार्रवाई के बारे में सर्वसम्मति कायम कर, आवश्यक और व्यापक कानूनी प्रावधान की और कानून-व्यवस्था कायम करने वाले अपने तंत्र को कमान थमा दी। दूसरी तरफ, भारतभूमि पर दशकों से जारी आतंकवाद के बावजूद हम अब भी मुद्दों की घालमेल करने, एक दूसरे पर दोषारोपण करने और लोक-लुभावन रुख अख़्तियार करने के खेल में संलिप्त हैं। दुनियाभर के आतंकवादी संगठन आपस में संपर्क कायम कर बेहद समन्वित और वैश्वीकृत नेटवर्क तैयार कर चुके हैं, लेकिन हम राष्ट्रीय प्रतिक्रिया के बारे में न्यूनतम समझौता अथवा समन्वय स्थापित करने में भी असफल रहे हैं।

परिणामस्वरूप जहां कहीं भी आतंकवाद का कुत्सित चेहरा नज़र आता है, वहां देश के विभिन्न सुरक्षा बलों से अधिकाधिक सैन्य टुकड़ियां भेज दी जाती हैं। इस छूत की बीमारी को रोकने तथा प्रभावी तंत्र विकसित करने में सरकार के असफल रहने के कारण उन्हें अपना बलिदान देने के लिये तत्पर रहना होता है।

लेकिन जैसा कि मीडिया, राजनीतिक लोग और आमजन प्राय: मान बैठते हैं, सुरक्षा बल कोई शक्लरहित, निराकार, मशीनी बल नहीं होते कि उन्हें जब चाहे निरर्थक कामों में लगा दिया जाए। इन बलों में काम करने वाले लोग भी मनुष्य हैं, इसलिये शहीद हो जाने की उनकी इच्छा की भी एक सीमा है। आज किसी ऐसे राजनीतिक नेता का उदाहरण मिलना मुश्किल है जिसने रक्षाकर्मियों के हितों से जुड़े मुद्दे अथवा उन्हें ज़रूरी अधिकार, उपकरण और सुविधाएं उपलब्ध करने के सवाल उठाए हों जबकि उनके शत्रु निरंतर नवीन तकनीक और प्रौद्योगिक हासिल कर अपने को अधुनातन

बनाए जा रहे हैं। दूसरी तरफ, अनेकानेक नेता और सार्वजनिक छवि वाले लोग आतंकवादियों और उनके हिमायतियों की भाषा बोलते नज़र आते हैं। वे हमें निर्दोष लोगों की जान लेने वाले 'बच्चों' और 'भाई बहनों' के मंतव्य और मूल कारणों को समझाने की कोशिश करते नज़र आते हैं।

आज आतंकवाद का बहादुरी से मुक़ाबला करने वाले अनेकानेक लोगों को आतंकवादियों के अपवित्र संगठनों और उनके मानवाधिकार मंचों तथा दोषपूर्ण और पूर्वाग्रही न्यायिक व्यवस्था के आसरे छोड़ दिया गया है। ऐसा लगता है मानो राष्ट्रीय संगठनों की सारी ताक़त असमानुपाती रूप से उन्हीं लोगों को लाभ पहुंचाने में झोंक दी गई है जो इन संगठनों को ही बर्बाद करने पर आमादा हैं। हमारे कानूनी और संस्थागत सुरक्षा उपायों के द्वारा आज आतंकवादी और उनके प्रतिनिधि ही सबसे ज्यादा रक्षित हैं, और जो दिशा हमारी राजनीति ने पकड़ ली है, उसमें निर्दोष लोग, संस्थागत और निजी संपदा तथा देश की रक्षा के लिये लड़ने वाले लोगों को प्राय: निर्दयी और असमाप्य आक्रमणों से बचाव हेतु खुद अपने उपायों के भरोसे छोड़ दिया गया है।

निश्चय ही कुछ मामलों में सकारात्मक हलचलों के प्रमाण मिलते हैं। प्रकट रूप से भारी कमियां निहित होने के बावजूद चिरप्रतीक्षित नवीन पुलिस अधिनियम का प्रारूप तैयार किया जा चुका है। पुलिस तथा सुरक्षा बलों के आधुनिकीकरण के लिये कोष की व्यवस्था की समस्या अब नहीं है, हालांकि इस कोष का कुशल उपयोग नहीं हो पाता। मतभेदों के बावजूद केंद्र और राज्य सरकारों के बीच समन्वय बढ़ा है। राजनीतिकों और केंद्रीय नौकरशाहों के बीच देश में आतंकवादी ख़तरे और उसके आयामों के बारे में जानकारी धीरे-धीरे ही सही, लेकिन लगातार बढ़ रही है। हालांकि दृष्टिभ्रम अब भी बना हुआ है, लेकिन इसके बावजूद नीतिगत स्तर पर न सही कम से कम मंतव्य की एकात्मकता गोचर होने लगी है।

इन सबके बावजूद विभिन्न सुरक्षा बलों तथा केंद्र और राज्य सरकारों के बीच तादात्म्य अब भी मुंह बाए खड़ा है। आतंक निरोधी बलों की कमान और नियंत्रण प्रणालियां अब भी अधूरी हैं। इस संदर्भ में गौरतलब है कि विभिन्न सुरक्षा बलों को मिलाकर चलाए जाने वाले उन आपरेशनों में जिनमें सेना भी शामिल होती है, एकीकृत कमान ही प्रमुख होता है। व्यवहार में ऐसी संरचना संविधान के विरुद्ध है जिसमें आंतरिक सुरक्षा तथा आतंक निरोध सहित समस्त मामलों में नागरिक प्रशासन को ही प्रमुखता दी गई है। पारंपरिक रूप से एकीकृत कमान में सेना को सर्वोच्चता प्रदान की जाती है जिससे राज्यों के पुलिस बल और अर्धसैनिक बल उनके आधीन आ जाते हैं अथवा उन्हें हाशिये पर धकेल दिया जाता है। यह व्यवस्था विभिन्न बलों को मिलाकर चलाए जाने वाले ऑपरेशनों के लिये बहुत उपयुक्त नहीं है। आतंक अथवा उपद्रव समाप्त करने में कहीं भी इसे सीमित सफलता ही मिल पाई है। इसके बावजूद जहां कहीं भी सेना को बुलाया जाता है, कमान और नियंत्रण के लिये इसी प्रविधि को वरीयता दी जाती है। अब समय आ गया है कि इसकी आमूल-चूल समीक्षा करा समन्वयकारी और सहयोगी कमान के अधिक प्रभावी निर्देश को अंगीकार किया जाए।

अब देशभर में आतंक निरोधी तथा उपद्रव निरोधी आपरेशनों के लिये केंद्रीय रिज़र्व पुलिस बल को प्रमुख एजेंसी बना दिया गया है। इसे जम्मू-कश्मीर और पूर्वोत्तर सहित हिंसा प्रभावित सभी प्रमुख क्षेत्रों में तैनात कया जा रहा है और वहां एकीकृत कमान संरचना अपनाई जा रहा है। माओवादियों द्वारा प्रभावित राज्यों जैसे उन अन्य राज्यों में भी, जहां सेना तैनात नहीं है, अंतरबल समन्वय और अंतरराज्य समन्वय से जुड़ी समस्याएं पेश आ रही हैं। इस समस्या को प्रभावित राज्यों तथा केंद्र के राजनीतिक नेतृत्व ने बार-बार रेखांकित किया है, लेकिन अपेक्षित तादात्म्य स्थापित करने की दिशा में नगण्य प्रगति हुई है। केंद्रीय रिज़र्व पुलिस बल को नयी भूमिका से जुड़ी अपेक्षाएं पूरी करने के लिये अपेक्षित सांस्थानिक परिवर्तन करना अभी शेष है।

समस्या मानवसंपदा, हथियारों तथा प्रौद्योगिकियों आदि जैसी विशिष्ट क्षमताओं में टुकड़ों में और मनमर्जी बढ़ोतरी करने की प्रवृत्ति में निहित है। समय-समय पर यह बढ़ोतरी बिना किसी समन्वयकारी योजना के आपदा विशेष पर प्रतिक्रिया स्वरूप कर दी जाती है। इस दृष्टिकोण की कमियां प्रकट रूप से दिखाई देती ही रहती हैं। उदाहरण के लिये, आधुनिकीकरण को ही ले लें। जो कुछ भी किया जा रहा है उसे गलत रूप से आधुनिकीकरण का नाम दे दिया जाता है, जबकि उसे अधिक से अधिक 'तकनीक-वर्धन' कह सकते हैं। आधुनिकीकरण के नाम पर सुरक्षा बलों को प्रौद्योगिकियां दी जाती हैं वे प्राय: 30 से 40 साल पुराना होता हैं। संचार जैसी उदीयमान प्रौद्योगिकियों के मामलें में भी जब तक किसी मॉडल को उपलब्ध कराया जाता है, वे प्राय: पुरानी और निरर्थक हो चुकी होती हैं। समकालीन प्रौद्योगिकी परिवर्तन की इस गति के मद्देनज़र प्रौद्योगिकी का मूल्यांकन कर उनकी खरीद के लिये एक विशेष समिति गठित करना ज़रूरी हो गया है। प्रौद्योगिकियां आज सुरक्षा बलों को सार्थक बनाने की बजाय उनकी बेड़ियां बनती जा रही हैं और उनकी वजह से निधियों का एक बड़ा हिस्सा पूरी तरह बर्बाद हो रहा है।

एक दूसरा पहलू प्रौद्योगिकी अर्जन का केंद्रीकृत होना है जिससे विलंब और भ्रष्टाचार बढ़ता है तथा अनुपयुक्त प्रौद्योगिकियां हासिल कर ली जाती हैं। खरीद में ज्यों-ज्यों भ्रष्टाचार बढ़ता जाता है त्यों-त्यों ज़मीनी ज़रूरतों की बजाय भ्रष्टाचार ही इस का निर्णायक बनता जाता है कि कौन-सी प्रौद्योकियां हासिल की जाएं। इससे सुरक्षा बल बुरी तरह हतोत्साहित होते हैं। आधुनिकीकरण के कोष को अधिक विशिष्टिता वाला बना कर अलग-अलग मदों के तहत ही विनिर्गत करना होगा। एकमुश्त निधि उपलब्ध कराने से उनके विचलन और रिसन की संभावना बढ़ जाती है।

आधुनिकीकरण का अभिप्राय केवल बेहतर हथियार और प्रौद्योगिकियों की खरीद नहीं है। मौजूदा कोशिशों के दायरे से प्रविधियों और दिमागों का आधुनिकीकरण सर्वथा अनुपस्थित है। कुछ मामलों में आधुनिकीकरण की मांग शस्त्रों की मारक क्षमता को लगातार बढ़ाए जाने की बजाय उसे कम करने की हो सकती है। प्रभावी आतंक विरोधी बलों और अनुक्रियाओं का स्वरूप निर्धारित करने से पहले हमें सुरक्षा बलों हेतु मानव संसाधन के

स्वरूप, प्रबंधन तंत्र, रणनीतियों, प्रविधियों अनुक्रियाओं और प्रशासन को विरासत में मिली प्रणालियों के आदिम अवरोधों से मुक्त कर बाहर लाना होगा।

सालों से राष्ट्रीय नेतृत्व अपने आप को और समूचे देश को यह कह कर भ्रमित करता रहा है कि आतंकवाद का समझौते के द्वारा आसानी से समाधान किया जा सकता है। यह समझौता पाकिस्तान आतंकी संगठनों के सार्वजनिक मंचों अथवा स्वयं आतंकवादी समूहों के साथ हो सकता है। लेकिन सच्चाई यह है कि ये प्रतिरोध की दीर्घकालीन लड़ाइयां हैं और इन लड़ाइयों को जारी रखने की भारत के दुश्मनों के दृढ़ निश्चय को लेकर किसी प्रकार का भ्रम नहीं रखना चाहिए। ऐसी सुदीर्घ लड़ाइयों के लिये ऐसे प्रभावी और स्थिर सरकारी तंत्र की दरकार होगी जो आतंकवादियों को ढूंढ-ढूंढ कर नष्ट कर दे और उसके समर्थकों एवं प्रायोजकों को असहनीय क्षति पहुंचाए। लेकिन दुर्भाग्य से हम ठीक इसकी विपरीत दिशा में बढ़ते जा रहे हैं। शत्रुओं को खुश करने की नीति राजनीतिक दृष्टि बन गई और सुरक्षा बलों को लगातार यह कहा जा रहा है कि अपने हाथ पीछे बांधे रखकर काम करो। इस तरह जो माहौल तैयार हो रहा है वह आतंकवादियों द्वारा शोषण और उनके कार्य संचालन के अधिकाधिक अनुकूल है।

आतंकवाद को लेकर भारतीय राजनीतिक बहस के एक दूसरे पहलू में 'सेना बनाम विकास' अथवा 'सेना बनाम राजनीतिक' समाधान के रूप में नकली द्वैध तैयार किया गया है। यह भारी मूर्खता है लेकिन यह राजनीतिक दृष्टि से सही मूर्खता है। विकासात्मक अथवा राजनीतिक समाधान की वकालत और सैन्य समाधान की कथित अतार्किकता की पुरज़ोर आलोचना ऐसा सार्वजनिक मुद्दा है जिसके फायदे ही फायदे हैं। इस प्रकार, देशभर में बढ़ते आतंकवाद और हिंसा के साथ-साथ विकास, राजनीति तथा भूमि सुधार, उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में सुदीर्घकाल से उपेक्षित लोगों को सामाजिक न्याय दिलाने की ज़रूरत को लेकर लगातार ढेर सारी बातें जारी रहती हैं। हमें बार-बार बताया जाता है कि बढ़ते उग्रवादी तथा आतंकवादी आंदोलनों की समस्या का एकमात्र समाधान विकास है और जब-तक हम इन इलाकों में ग़रीबी, पिछड़ेपन और वंचन को दूर नहीं करेंगे तब-तक आतंकवादियों की ताक़त बढ़ती ही जाएगी।

यह दृष्टिकोण कई स्तरों पर गलत है इसके परिणामस्वरूप प्रतिरोधी नीतियां तैयार की जाती हैं। इन तर्कों पर यहां विस्तार से चर्चा करने की गुंजाइश नहीं है। लेकिन यह जानना उपयोगी होगा कि वास्तव में कोई भी कथित मूल कारण उपद्रव अथवा आतंकी हिंसा के अभ्युदय की व्याख्या करने में समर्थ नहीं है। उपद्रवग्रस्त इलाकों में शासन व्यवस्था और सरकार का विस्तार नेटवर्क खासतौर पर ग्रामीण अंचलों में पूरी तरह ध्वस्त हो जाता है और विकास कार्यों के लिये भेजे गए संसाधनों का राष्ट्रव्यापी रिसाव इन इलाकों में और भी बढ़ जाता है। परिणामत: लक्षित आबादी को विकासात्मक आवंटन का नगण्य लाभ ही हासिल हो पाता है और एक बड़ा हिस्सा उपद्रवियों और राष्ट्र विरोधी समूहों के हत्थे चढ़ जाता है। निश्चय ही आप किसी पूर्ण विकसित उपद्रव का विकास अवरूद्ध नहीं कर सकते।

इस नज़रिये के साथ एक और बुनियादी मुश्किल है। आधुनिक सरकार को केवल देशद्रोही हिंसा वाले इलाकों में ही पिछड़ेपन और जनअसंतोष की समस्या का निबटारा नहीं करना होता, उन्हें इन समस्याओं का निराकरण समूचे देश में करना होता है; और यही उनका काम भी है। लेकिन हिंसाग्रस्त इलाकों के लिये असमानुपातिक रूप से संसाधनों के आवंटन कर वहां सुधार और विकास के प्रयासों से निष्कर्ष यह निकलता है कि सरकार इस धारणा को वैधानिक स्वरूप प्रदान कर रहा है कि सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन हिंसा के बगैर हासिल नहीं किया जा सकता। ऐसी कार्यवाही से हिंसक विचारधाराओं के देखादेखी विस्तार मिलता है।

अत: जब तक शिक्षा, स्वास्थ्य और न्यूनतम सामाजिक सुरक्षा, बड़े पैमाने पर निजी निवेश तथा व्यापक रूप से विकेंद्रीकृत ग्रामीण उद्यम की संस्थापना को प्रोत्साहित करने वाले परिवेश का सृजन नहीं कर लिया जाता, तब-तक उपद्रवग्रस्त अथवा निर्धनता प्रभावित इलाकों के लिये विभिन्न 'पैकेजों' का कोई प्रभाव गोचर होना कठिन है। इसलिये अब सार्वजनिक व्यय को पूरी ताक़त से भारत के गावों में इन स्थितियों, उत्पादक परिसंपत्तियों और क्षमताओं, न्यूनतम आधुनिक बुनियादी ढांचे तथा सुविधाओं के सृजन की ओर उन्मुख करना होगा। इसी से उन्हें तेजी से बढ़ रही शहरी अर्थव्यवस्था के साथ तथा उसके जरिये वैश्विक दुनिया के साथ एकात्म स्थापित करने में मदद मिलेगी।

यह समझना ज़रूरी है कि कानून-व्यवस्था बनाए रखना उपर्युत सभी बातों की पूर्व शर्त है, न कि उनका परिणाम। इसलिये समूचे देश में सालभर कानून-व्यवस्था बनाए रखना जरूरी होगा न कि केवल कोई चुनौती उत्पन्न होने या किसी उच्च स्तरीय व्यक्ति को लक्षित किए जाने पर। जब तक विघ्नकारी और देशद्रोही हिंसा को नियंत्रित नहीं किया जाता और सुरक्षा का माहौल बनाया जाता, तब तक पुनर्निमाण प्रक्रिया की किसी भी दूसरी शर्त को पूरा नहीं किया जा सकता।

सैन्य चिंतक कार्ल वोन क्लॉजविट्ज चेतावनी देते हुए कहते हैं कि युद्ध में ''दया दिखाने की वजह से जो गलतियां होती हैं, वे सर्वाधिक बुरी होती हैं।.... यदि एक पक्ष खून-खराबे की चिंता किए बगैर विवेकहीन बल प्रयोग करे और दूसरा पक्ष उससे बचे तो पहले पक्ष को मज़बूती मिलेगी।'' आतंक-निरोधी दृष्टिकोण तैयार करते वक्त हमें इस सिद्धांत को याद रखना होगा। हम तो आतंक-निरोधी नीति अथवा रणनीति बनाने से अभी कोसों दूर हैं। भारत में जनतांत्रिक ढांचे के भीतर बल प्रयोग के सवाल काफी मतिभ्रम है। यहां इस विचार की प्रबलता है कि सभी प्रकार के बल प्रयोगों से किसी-न-किसी रूप में जनतांत्रिक मूल्यों का उल्लंघन होता है और सरकार को समस्त समस्याओं अथवा विवादों का समाधान बातचीत के द्वारा करना चाहिए। इस मतिभ्रम के कारण इस विचार को कि कानून का शासन (न कि चुनावी प्रक्रिया) ही जनतंत्र का सार है, पूरी तरह तिलांजलि दे दी गई है। दुर्भाग्य से जनतंत्र के पक्ष में बोलने वाले लोग ही जनतांत्रिक सिद्धांतों के बुनियादी पहलुओं खासकर जनतांत्रिक शासन व्यवस्था में सैन्य

प्रादेशिक औद्योगिक सुरक्षा बल गठित करने का सुझाव

○ हरीश लखेड़ा

केंद्र सरकार नक्सलियों और आतंकियों से निपटने को लेकर केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सीआईएसएफ) की तर्ज़ पर राज्यों से भी प्रादेशिक औद्योगिक सुरक्षा बल गठित कराने की कोशिश में है। आतंकियों और नक्सली संगठनों द्वारा सरकारी संपत्तियों को तबाह करने की रणनीति से निपटने के लिये केंद्रीय गृह मंत्रालय ने राज्यों को सीआईएसएफ की तर्ज़ पर राज्य औद्योगिक सुरक्षा बल गठित करने की सलाह दी है। केंद्र सरकार इसलिये भी चिंतित है कि पिछले तीन वर्षों के दौरान नक्सली संगठनों ने विभिन्न क्षेत्रों में 25 अरब रुपये की सरकारी व निजी संपत्तियों को नुकसान पहुंचाया है।

केंद्रीय गृहमंत्री शिवराज पाटिल खुद मान चुके हैं कि देश के प्रमुख विद्युत, परमाणु, बांध, शैक्षिक प्रतिष्ठान आतंकी संगठनों के निशाने पर हैं। केंद्र ने अपने कार्यालयों और प्रमुख संस्थानों की सुरक्षा के लिये तो सीआईएसएफ को तैनात किया है लेकिन राज्यों के अधिकतर प्रमुख संस्थानों की सुरक्षा भगवान भरोसे ही है। ज्यादातर राज्यों में आबादी के हिसाब से पुलिस बल कम है और जो है भी वह संसाधनों की कमी से जूझ रहा है। जबकि बांधों से लेकर बड़ी जल परियोजनाओं, विद्युत परियोजनाओं समेत ज्यादातर प्रतिष्ठान राज्यों के पास हैं।

केंद्र सरकार भी मानती है कि नक्सली संगठन अब पुलिस से सीधे टकराने की बजाय संपत्तियों को निशाना बनाने की रणनीति अपना रहे हैं। जबकि केंद्र की चिंता यह भी है कि ज्यादातर राज्य आंतरिक सुरक्षा के लिये केंद्रीय सुरक्षा बलों पर ही निर्भर होते जा रहे हैं। राज्यों को रिजर्व इंडिया बटालियनें गठित करने को भी कहा गया है, लेकिन अधिकांश राज्यों की प्रगति संतोषजनक नहीं है। राज्य यदि केंद्र की सलाह मानें तो उन्हें ज्यादा ख़र्च भी नहीं करना पड़ेगा। क्योंकि सीआईएसएफ के साथ भी ऐसा ही है। यह बल केंद्र सरकार को पैसा कमा कर देती है। जो संस्थान इससे सेवा लेता है उसे इसका पूरा खर्च उठाना पड़ता है। केंद्र ने कहा है कि राज्य भी यही नीति अपना सकते हैं। सीआईएसएफ का मुख्य काम वैसे तो केंद्रीय औद्योगिक संस्थानों की संरक्षा करना है लेकिन अब उसे केंद्र सरकार के कार्यालयों, भवनों, हवाई अड्डों और लालकिला तथा ताजमहल समेत कई पुरातात्विक इमारतों की सुरक्षा भी दे दी गई है। राज्य भी ऐसा ही कर सकते हैं। ❑

बल की भूमिका पर चली बहसों से अनभिज्ञ जान पड़ते हैं। राजनीतिक रूप से सही जान पड़ने वाले तोता-रटंत ने हमें आपराधिक और आतंकवादी हिंसा के शिकार लोगों की पीड़ा के प्रति उदासीन बना दिया है। दूसरी ओर, हिंसा और आतंक का सहारा लेने वाले लोगों की चिंताओं और शिकायतों का बीन लगातार बजाया जा रहा है। इस तरह ताक़तवर दृष्टिकोण हिंसा का सहारा लेने वालों के सभी अवरोधों को दूर कर देता है जबकि यह कानून के शासन की रक्षा करने के लिये जिम्मेदार सरकारी एजेंसियों के सम्मुख असामान्य और अतार्किक अवरोध खड़ा कर देता है।

आतंकवाद के लिये त्वरित, तत्काल और निर्णायक मात्रा में बल की ज़रूरत होती है। इसके लिये संस्थागत संरचना की आवश्यकता होती है जिसे न केवल आतंक-निरोधी कार्रवाइयों के लिये प्रयुक्त किया जा सके वरन आतंकवादी गतिविधियों के प्रभाव को कम करने और राहत पहुंचाने के लिये उपयोग में लाया जा सके। लेकिन इसके लिये बल प्रयोग की ज़रूरत और उसके स्वरूप को स्पष्ट रूप से समझने के साथ-साथ इस बात को भी समझ लेना अपेक्षित होता है कि हास्यास्पद, कमज़ोर और अप्रभावी बल के प्रयोग से हिंसा और बढ़ती है। यह भी समझना ज़रूरी है कि राजनीतिक तथा सुलह-समझौते वाले समाधान पर लगातार ज़ोर देते रहने से कानून का अनुपालन करने वाले नागरिकों एवं देश की क़ीमत पर हिंसा और आतंक को तरजीह मिलती है। इस तरह, जब हम यह तर्क देते हैं कि 'ये हमारे भाई-बहन और बच्चे हैं' तो हम यह भुला बैठते हैं कि मारे जाने लोग भी 'हमारे भाई-बहन और बच्चे ही हैं।' इन लोगों को सुरक्षा प्रदान करना और कानून का राज कायम करना सरकार की पहली संवैधानिक दायित्व है जिससे वह बच नहीं सकती। आतंक निरोधी नीति और अनुक्रिया सरकार की जिम्मेदारी है और इस संदर्भ में उसे दया अथवा पक्षपात की गुंजाइश छोड़े बगैर व्यावहारिक बुद्धि का सहारा लेना चाहिए।

इतिहास गवाह है, दुनियाभर में राष्ट्रों को अपनी स्वाधीनता बनाए रखने अथवा उसे पुन: नवीन स्वरूप प्रदान करने के लिये शस्त्रबलों का सहारा लेना पड़ा है। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में असाधारण रूप से अस्थिरता आ बिराजी है और भारत का हरेक पड़ोसी देश सरकारों की नाकामी को छुपा नहीं पा रहा। खुद भारत में अस्थिर करने वाली ताक़तें मौजूद हैं और देश के एक बड़े भू-भाग में अव्यवस्था विराजमान है एवं शासन नाकाम साबित हो रहा है। स्वाधीनता उसके कानूनों और संस्थानों के रक्षार्थ सशस्त्र शक्ति प्रयोग न केवल नैतिक ज़रूरत है बल्कि यह अपनी उत्तरजीविता के लिये भी जरूरी है। यह एक ऐसी मांग है जिसे पूरा करना ही होगा। लेकिन यह काम आत्माभिमान तथा अतिराष्ट्रवाद अथवा सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और उत्पीड़न की उदीयमान प्रवृत्तियों के साथ नहीं किया जा सकता, वरन इसे तार्किकता पर सतत विश्वास, आतंकवाद और अव्यवस्था की व्यापक समझ तथा जनतांत्रिक, कानून सम्मत व प्रभावी अनुक्रिया के साथ पूरा करना होगा। ❑

(लेखक पंजाब पुलिस के महानिदेशक रह चुके हैं। वर्तमान में वह नयी दिल्ली स्थित इंस्टीट्यूट ऑफ कंफ्लिक्ट मैनेजमेंट के अध्यक्ष तथा छत्तीसगढ़ सरकार के नक्सलवाद संबंधी सलाहकार हैं)

भारत में नक्सलवादी आंदोलन

❍ प्रकाश सिंह

आंदोलन वस्तुतः 14 राज्यों के 165 जिलों में फैल चुका है। सरकार ने इस समस्या से निपटने के लिये एक व्यापक 14सूत्री योजना तैयार की है। इस योजना में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के आर्थिक–सामाजिक विकास पर विशेष ज़ोर दिया जा रहा है और राज्य सरकारों को निर्देश दिए गए हैं कि वे भूमि सुधार तेज़ी से लागू करें

नक्सलवादी आंदोलन का नाम एक गांव नक्सलवाड़ी के नाम से जुड़ा हुआ है जो भारत, नेपाल और तब के पूर्वी पाकिस्तान की सीमा पर स्थित है। 1967 में यहां आदिवासियों ने भूस्वामियों के खिलाफ हथियार उठा लिये थे। इसके बाद यह आंदोलन जंगल की आग की तरह देश के अन्य भागों में फैल गया। देश के कुछ भागों के सर्वश्रेष्ठ और बड़े बुद्धिमान लोग घर और कॉलेज छोड़कर इस आंदोलन से जुड़ गए और उन्होंने एक नयी सामाजिक व्यवस्था के सपने देखे। स्वाधीनता प्राप्ति के दो दशक के बाद भी भारत की आबादी का एक बड़ा तबका किसान, श्रमिक और आदिवासी शोषण का शिकार हो रहा था। ऐसा महसूस किया गया कि शांतिपूर्ण तरीकों से ज़रूरी परिवर्तन नहीं आ पाएंगे क्योंकि निहित स्वार्थों के हाथ में सत्ता और उद्योगों का नियंत्रण बना हुआ है और खेतिहर वर्ग पर प्रमुखत: सामंती पकड़ बनी हुई है। उनका विचार था कि इन सबसे छुटकारा पाने का एकमात्र तरीका था सशस्त्र क्रांति।

इतिहास

नक्सलवाड़ी के तीर–धनुषधारी संथालों ने कुलक की भूमि पर जबरन कब्ज़ा कर लिया और मालिकाना हक़ जताने के लिये उस पर हल चलाया। जिन लोगों ने अपने भंडार में धान जमा कर रखा था उनके घर के सामने प्रदर्शन किए गए। अनेक मामलों में पूरा स्टॉक छीन लिया गया और उसे या तो बांट दिया गया या फिर सस्ते दाम पर बेच दिया गया। खूनी झड़पें हुईं। मार्च से मई 1967 के बीच पुलिस को इस प्रकार की लगभग 100 वारदातों की ख़बरें मिलीं। हालत धीरे–धीरे और ख़राब होती गई। कुछ हिचकिचाहट के बाद पश्चिम बंगाल सरकार ने पुलिस को कार्रवाई करने के निर्देश दिए। आंदोलन दबा दिया गया लेकिन 'नक्सलवाड़ी से अनेक भ्रातियां दूर हो गईं।'

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने भारत की मार्क्सवादी (एमएल) के गठन का स्वागत किया। ब्रिटेन, अल्बानिया और श्रीलंका के लेनिनवादी समूहों ने भी इसे मान्यता प्रदान की।

उत्थान

माओवादी विचारधारा से प्रेरणा लेने वाले नक्सलवादी इस पार्टी के गठन के दो साल बाद तक बहुत चर्चा में रहे। यह स्थिति जून 1971 तक चली। नक्सलवाड़ी से शुरू यह आंदोलन दूर–दूर तक फैल गया और देश के लगभग हर भाग तक पहुंच गया। सिर्फ पूर्वोत्तर राज्यों, गोवा, पांडिचेरी और अंडमान निकोबार द्वीप के इलाके ही इससे अछूते रहे। इस आंदोलन की खास बात थी वर्ग शत्रुओं का सफाया। इसे उच्चस्तर के वर्ग संघर्ष और छापामार युद्ध की शुरुआत माना गया। इस आंदोलन के नेता चारू मजूमदार का अनुमान था कि "भारत का हर कोना एक ज्वालामुखी बन चुका है। यह फूटने वाला ही था और भारत में बहुत ज्यादा उथल–पुथल की संभावना थी।" यही ध्यान में रखते हुए उन्होंने अपने सदस्यों का आह्वान किया। उनका संदेश था "संघर्ष का कहीं भी और हर जगह विस्तार करो।" आंध्र प्रदेश के श्रीकाकुलम, पश्चिम बंगाल के देबरा गोपीबल्लभपुर, बिहार के मुसहरी और उत्तर प्रदेश के लखीमपुर जिले के पलिया इलाके में इसका खास असर दिखाई दिया।

1970 के मध्य और 1971 के बीच नक्सलवादी हिंसा अपने चरम पर थी। समझा जाता है कि इस अवधि में लगभग 4,000 वारदातें हुईं। अधिकांश घटनाएं पश्चिम बंगाल (3,500) और बिहार (220) तथा आंध्र प्रदेश (70) में हुईं।

राजनीति दलों को एक नयी ताक़त के उभरने का आभास हुआ। सरकार इस नये ख़तरे से चौकस हुई। यह न सिर्फ कानून और व्यवस्था के लिये चुनौती थे बल्कि इससे देश की लोकतांत्रिक प्रक्रिया को भी ख़तरा था।

पराभव

सरकार ने देश के सीमावर्ती राज्यों, खासतौर

से पश्चिम बंगाल, बिहार और उड़ीसा के नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में सेना की सहायता से संयुक्त अभियान शुरू किया। ये अभियान 1 जुलाई से 15 अगस्त, 1971 तक चले और इन्हें 'आपरेशन स्टीपलचेज' का कोड नाम दिया गया। इसकी रणनीति की खास बात यह थी कि एक इलाके में ज्यादा से ज्यादा मज़बूत घेरेबंदी कर ली जाती थी और उसके आने-जाने के सारे रास्ते बंद कर दिए जाते थे। बाहरी घेरे पर सेना और आंतरिक घेरे में केंद्रीय रिज़र्व पुलिस बल तैनात किया जाता था। स्थानीय पुलिस एक मैजिस्ट्रेट के साथ गहन तलाशी अभियान चलाती थी। संदिग्ध नक्सलवादियों को गिरफ्तार कर लिया जाता था, अवैध हथियार जब्त कर लिये जाते थे और विस्फोटक छीन लिये जाते थे। जहां तक संभव हो, पड़ोसी क्षेत्र में भी यह अभियान उसी समय चलाया जाता था ताकि अगर कोई नक्सलवादी भाग कर उधर पहुंचे तो उसे पकड़ लिया जाए। यह मुहिम पश्चिम बंगाल के मेदिनीपुर, पुरुलिया, वर्धमान और बीरभूम जिलों, बिहार के धनबाद, संथाल परगना जिलों तथा उड़ीसा के मयूरगंज जिले में चलाया गया।

इस कार्रवाई के अच्छे परिणाम मिले। हालांकि उतने बढ़िया नहीं जितने की प्रशासन ने उम्मीद की थी। इन जिलों में नक्सलवादियों का संगठन तहस-नहस हो गया और पार्टी के कार्यकर्ता सुरक्षित स्थानों की ओर भाग गए। हिंसा की वारदातें कम हो गईं। हथियार छीनने की घटनाओं में कमी आई। सबसे बड़ी बात यह कि लोगों के मन में सरकार की क्षमता के प्रति विश्वास बहाल हुआ। 16 जुलाई, 1972 को कोलकाता पुलिस ने चारू मजूमदार को गिरफ़्तार कर लिया। कुछ दिनों बाद उनकी मृत्यु हो गई। उनके निधन के साथ नक्सलवादी आंदोलन के एक अध्याय का अंत हो गया। इसके बाद इस पार्टी में फूट और बिखराव का दौर शुरू हो गया।

बहाली

सन् 1980 में आंध्र प्रदेश में कोंडापल्ली सीतारमैया के नेतृत्व में पीपुल्स वार ग्रुप (पीडब्ल्यूडी) के गठन के साथ इस आंदोलन में फिर जान आ गई। पीडब्ल्यूडी के कार्यक्रम में निम्नलिखित बातें शामिल थीं:

- भूमि का पुनर्वितरण
- खेतिहर मज़दूरों को न्यूनतम मज़दूरी दिलाना
- कर और जुर्माना लगाना
- जन अदालतों का संचालन करना
- सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुंचाना
- सरकारी कर्मचारियों का अपहरण करना
- पुलिसकर्मियों पर हमला करना, और
- सामाजिक संहिता लागू करना

विश्वास किया जाता है कि पीडब्ल्यूजी ने आंध्र प्रदेश में करीब पांच लाख एकड़ भूमि का पुनर्वितरण किया है। इसके कार्यकर्ता न्यूनतम दिहाड़ी और सालभर की मज़दूरी की फीस (जीतागाड्) लागू करते हैं। ग़रीब तबके को लगा कि अब तक राजनीतिक नेता जो बातें करते थे और सरकार जो वादे करती आ रही थी, वह नक्सलवादी एक ही झटके में लागू कर रहे हैं। दूरदराज के इलाकों में उन्हें गोराकला डोरा (झाड़ियों में छिपा देवता) कहा जाने लगा। अपने गिरफ्तार सदस्यों को छुड़ाने के लिये उन्होंने बंधक बनाना शुरू कर दिया। 27 दिसंबर, 1987 को उन्होंने पूर्वी गोदावरी जिले के पुलिमातु में 6 आईएएस अधिकारियों को तब बंधक बना लिया जब वे एक आदिवासी कल्याण मीटिंग से लौट रहे थे। इनमें राज्य सरकार के प्रधान सचिव व जिले के कलेक्टर शामिल थे। राज्य सरकार ने सुरक्षित रास्ता अपनाने का फैसला किया और आठ नक्सलवादियों को राजामुंदरी जेल से रिहा कर दिया गया। इससे पीडब्ल्यूजी को बहुत अधिक प्रचार मिला।

भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने माना है कि 9 राज्यों के 16 जिलों में नक्सलवाद फैला है। इन राज्यों के नाम हैं आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल। मंत्रालय ने यह भी स्वीकार किया है कि पीपुल्स वार और एमसीसीआई अपना प्रभाव तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल में भी फैलाने की कोशिश कर रहे हैं और कई नये इलाकों में इसका विस्तार हुआ है

पीडब्ल्यूजी के सांस्कृतिक संगठन जन नाट्य मंडली के क्रांतिकारी लेखकों ने एक ऐसा माहौल तैयार करने में मदद की जिनमें नक्सलवादी विचारधारा को बहुत स्वीकृति मिली। इनमें प्रमुख थे गुम्माड़ी विट्ठल राव जिन्हें गद्दर के नाम से जाना जाता है। उन्होंने अपने गीतों के जरिये प्रशासन का मुक़ाबला किया। धीरे-धीरे पीडब्ल्यूजी का प्रभाव राज्य के तटीय जिलों और रायलसीमा तक फैल गया। महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश और उड़ीसा के क्षेत्रों में भी संगठन की जड़ें और इसकी गूंज कर्नाटक और तमिलनाडु तक सुनाई दी।

1942 में आंध्र प्रदेश सरकार ने पीडब्ल्यूजी और इसके छह संगठनों पर प्रतिबंध लगा दिया। इसी समय आंध्र पुलिस केंद्रीय अर्धसैनिक बलों की मदद से उग्रवाद विरोधी कार्रवाई की। इसके परिणामस्वरूप 248 नक्सलवादी मारे गए और 1992 में 3,434 नक्सलवादी गिरफ़्तार किए गए। कोंडापल्ली सीतारमैया और अन्य नेताओं की गिरफ्तारी से पीडब्ल्यूजी को और धक्का लगा। नक्सलवादी कार्यकर्ताओं का नैतिक बल खत्म हो गया और 8,800 नक्सलवादियों ने अपने-आपको अधिकारियों के हवाले कर दिया।

उधर बिहार में एक अन्य नक्सलवादी संगठन- माओइस्ट कम्युनिस्ट सेंटर (एमसीसी) सक्रिय था और उसने अनेक हिंसक गतिविधियां की। इसका संगठनात्मक ढांचा बिहार के मध्यवर्ती जिलों में सक्रिय था। 1987 से 1992 के छह वर्षों के दौरान गया, चतरा और औरंगाबाद जिलों में आठ बड़ी वारदातें हुई जिनमें मरने वालों में 42 राजपूत, 40 भूमिहार, 5 मुसलमान, एक बीजेपी सांसद और तीन पुलिसकर्मी शामिल थे। सामाजिक और आर्थिक न्याय के नाम पर आरंभ हुई यह लड़ाई जातीय लड़ाई में

बदल गई। कुछ जगहों पर एमसीसी बकायदा समानांतर अदालतें चलाता था। इन्हें जन अदालत कहा जाता था जहां पर वे अभियुक्तों का सिर कलम कर देते थे जिसे वे छह इंच छोटा कर देना कहते थे।

आंदोलन की वर्तमान स्थिति

इस आंदोलन के मौजूदा दौर को तीसरा चरण कहा जा सकता है। इसकी शुरुआत 2001 में पीपुल्सवार ग्रुप की नौंवी कांग्रेस की बैठक के साथ हुई। इसी कांग्रेस में तय किया गया कि पार्टी के हथियार बंद भाग का नाम पीपुल्स गुरिल्ला आर्मी रखा जाए और इसे आधुनिक हथियारों से लैस किया जाए। पिछले पांच वर्षों में हुई कुल वारदातों और इनके परिणामस्वरूप हुई मौतों का विवरण इस प्रकार है :

तालिका-1

वर्ष	कुल वारदातें	मृतकों की संख्या
2001	1,208	564
2002	1,465	482
2003	1,597	515
2004	1,533	566
2005	1,594	669

इस प्रकार 2005 में हिंसक घटनाओं की संख्या सबसे अधिक 1,564 थी जिनमें 669 लोग मारे गए, हालांकि 2003 में भी वारदातों की संख्या अधिक थी।

भारत सरकार के गृह मंत्रालय ने माना है कि 9 राज्यों के 16 जिलों में नक्सलवाद फैला है। इन राज्यों के नाम हैं आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल। मंत्रालय ने यह भी स्वीकार किया है कि पीपुल्स वार और एमसीसीआई अपना प्रभाव तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल में भी फैलाने की कोशिश कर रहे हैं और कई नये इलाकों में इसका विस्तार हुआ है। इस आंदोलन को विचलित करने वाली बातें इस प्रकार हैं :

- बहुत बड़े भूभाग में इसका विस्तार
- हिंसा की संभावना में वृद्धि
- लाल गलियारा बनाने की योजना
- पीडब्ल्यू और एमसीसीआई का एकीकरण
- पूर्वोत्तर के बागी तत्वों और नेपाली माओवादियों से मिलीभगत

भारत सरकार ने बहुत बड़े भूभाग में इस आंदोलन के प्रसार पर चिंता प्रकट की है। प्रधानमंत्री ने नक्सलवादी आंदोलन को देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये सबसे बड़ा ख़तरा बताया है। संघर्ष प्रबंधन संस्थान के अनुसार यह आंदोलन वस्तुत: 14 राज्यों के 165 जिलों में फैल चुका है। वह गृह मंत्रालय के अनुमान को कम करके दिया गया बयान मानता है। नक्सलवादियों की हिंसक क्षमता काफी बढ़ी है। उन्होंने आधुनिक हथियार और देसी बम बनाने और इस्तेमाल करने में कुशलता प्राप्त कर ली है। समझा जाता है कि उनके पास 6,500 हथियार हैं जिनमें एके 47 रायफलें और सेल्फ लोंडिग रायफलें शामिल हैं।

इस आंदोलन को भरपूर प्रोत्साहन तब मिला जब इसके दोनों घटकों, पीपुल्स वार और माओइस्ट कम्युनिस्ट सेंटर ऑफ इंडिया ने 21 मार्च, 2004 को आपस में मिलाप करने का फैसला किया। इसकी घोषणा 14 अक्तूबर, 2004 को की गई। इस एकीकृत दल को कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (माओवादी) कहा गया। इस विलय से जहां इस आंदोलन का समर्थन आधार बढ़ा है, वहीं इसे अखिल भारतीय क्रांतिकारी स्वरूप भी मिल गया है। दोनों गुटों के एकीकरण के बाद नक्सलवादियों की भारत-नेपाल सीमा से दंडकारण्य क्षेत्र तक एक क्रांतिकारी क्षेत्र बनाने की योजना को बल मिला है और दोनों धड़ों के कार्यकर्ता एक हो गए हैं।

नक्सलवादी गुटों की अन्य उग्रवादी संगठनों के साथ सांठ-गांठ से यह समस्या और जटिल बन गई है। ऐसे संकेत हैं कि पीडब्ल्यूजी कार्यकर्ताओं को एलटीटीई के कार्यकर्ताओं ने हथियार चलाने और देसी बमों के इस्तेमाल का प्रशिक्षण दिया है। उनकी नगालैंड के नेशनल सोशलिस्ट कौंसिल ऑफ नगालैंड (आईएम) के साथ भी समझ बनी है और दोनों ने एक-दूसरे का समर्थन करना शुरू किया है। ऐसा लगता है कि सीपीएमएल-पार्टी यूनिटी के कुछ कार्यकर्ता और असम के यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट ऑफ असम इंडिया (माओवादी) ने कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ नेपाल (माओवादी) के साथ मिलकर कोई रणनीति भी बनाई।

राज्यों में स्थिति

आंध्र प्रदेश

धीरे-धीरे आंध्र प्रदेश देश में वामपंथी उग्रवाद का केंद्र बनता जा रहा है। पीडब्ल्यूजी ने दिसंबर 2000 में पीपुल्स गुरिल्ला आर्मी की स्थापना की। इसका उद्देश्य जनता की राजनीतिक प्रभुता को सुदृढ़ करना और राज्य तथा केंद्र सरकारों की क्रांति आंदोलन को रोकने की कोशिश को नाकाम करना है।

पीडब्ल्यूजी ने 1 अक्तूबर, 2003 को सबसे बड़ा दु:साहसी हमला किया और उन्होंने चित्तूर जिले में तिरुपति और तिरुमला के बीच जंगल की सड़क पर आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री एन चन्द्रबाबू नायडू की तब हत्या करने की कोशिश की जब वह ब्रह्मोत्सव समारोह में शामिल होने के लिये जा रहे थे। सड़क पर बिछाई गई क्लेमोर सुरंगों के धमाकों से मुख्यमंत्री की कार उड़ गई लेकिन उस पर बुलेट प्रूफ कवच होने के कारण वह बच गए। 4 अन्य नेता गंभीर रूप से घायल हो गए। इनमें राज्य के सूचना टेक्नोलॉजी मंत्री बी. गोपालकृष्णा रेड्डी शामिल थे। पीडब्ल्यूजी ने इस हमले की यह कहते हुए जिम्मेदारी ली कि उद्देश्य एक ऐसे व्यक्ति का सफाया करना था जो सरकारी हिंसा का सूत्रधार है।

जून-जुलाई 2002 के दौरान चिंतित नागरिक समिति की पहल पर पीपुल्स वार ग्रुप और आंध्र सरकार के बीच शांति वार्ताएं हुईं। तीन दौर की वार्ताओं के बावजूद दुर्भाग्यवश किसी बड़े मुद्दे पर सहमति नहीं हुई। पीडब्ल्यूजी ने जुलाई 2002 में यह कहते हुए वार्ता से अपने प्रतिनिधि हटा लिये कि फर्जी मुठभेड़ों के बहाने उसके कार्यकर्ताओं को मारा जा रहा है। 15 अक्तूबर से 18 अक्तूबर, 2004 तक हैदराबाद में दूसरे दौर की शांति वार्ता हुई लेकिन इसमें भी कोई

सार्थक चर्चा नहीं हो पाई। सरकार ने कस्बों और शहरों में नक्सली कार्यकर्ताओं के हथियार लेकर घूमने पर कड़ा एतराज जताया। नक्सलवादियों द्वारा कांग्रेस विधायक नरसी रेड्डी और 8 अन्य की महबूब नगर में 15 अगस्त, 2005 को हमला करके मार डालने की घटना इस वार्ता की निर्णायक बाधा साबित हुई। शांतिवार्ता बिना किसी नतीज़े के खत्म हो गई और सरकार ने कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया (माओवादी) और इसके प्रमुख संगठनों पर फिर से प्रतिबंध लगा दिया।

बिहार और झारखंड

बिहार में नक्सलवादी आंदोलन जातिवादी हिंसा और वैमनस्य में फंसकर रह गया। 5 जनवरी, 2005 को नक्सलवादियों ने मुंगेर के पुलिस अधीक्षक की जीप उड़ाकर हत्या कर दी। उनके साथ 6 अन्य पुलिस कर्मचारी भी मारे गए। बाद में माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर ने अपना ज़ोर झाखंड इलाके पर केंद्रित किया। झारखंड 15 नवंबर, 2000 को बिहार से अलग करके बनाया गया। कहा जाता है कि झारखंड के 22 में से 15 जिलों में नक्सलवादी सक्रिय हैं। ये लोग पुलिस कर्मचारियों और अर्धसैनिक बलों को निशाना बनाते रहे हैं।

मध्य प्रदेश एवं छत्तीसगढ़

मध्य प्रदेश के नवंबर 2000 में 2 टुकड़े किए जाने के बाद अब नक्सलवादी हिंसा सिर्फ बालाघाट मंडला, डिंडोरी और सीधी जिलों तक सीमित रह गई है। चार बड़े पीडब्ल्यूजी नेताओं की हत्या का बदला लेने के लिये 15 दिसंबर, 1999 को मध्य प्रदेश के परिवहन मंत्री लखीराम कावड़े की हत्या कर दी गई।

छत्तीसगढ़ में नक्सलवादी हिंसा का ज्यादा ज़ोर बस्तर इलाके में है। राजनंदगांव, जशपुर और सरगुजा जिलों में भी नक्सलवादी सक्रिय हैं। राज्य सरकार सल्वा जुडुम (शांतिमिशन) के जरिये आदिवासियों को एकजुट करने की कोशिश करती रही है। नक्सलवादी इसका विरोध करते हैं और वह जुडुम कार्यकर्ताओं की निर्ममता से हत्या कर देते हैं। इस तरह की हिंसा की ताज़ा घटना 16 जुलाई, 2006 को दांतेवाड़ा जिले में एक राहत शिविर में हुई, जहां माओवादियों ने 27 आदिवासियों को मौत के घाट उतार दिया।

पश्चिम बंगाल

अन्य राज्यों के मुक़ाबले पश्चिम बंगाल में नक्सलवादी हिंसा का ज़ोर कम है। इसका श्रेय 'ऑपरेशन बुर्का' नाम के एक सफल अभियान को दिया जाता है जिसके अंतर्गत बटाई पर खेती करने वालों को पंजीकृत करके उन्हें स्थायी और विरासत में मिलने वाले अधिकार दे दिए गए ताकि वे खेती करते रहें। कुल 11 लाख एकड़ ज़मीन पर इस तरह के बंदोबस्त किए जा चुके हैं। इसके अलावा सरकार ने एक लाख 37 हजार एकड़ ज़मीन, जो सीलिंग में सरप्लस मिली और बेनामी जमीन का अधिग्रहण करके उसे 25 लाख भूमिहीनों और छोटे किसानों में बांट दी। भूमि सुधारों के परिणामस्वरूप गांवों में ग्रामीण 'नवधनाढ्य' के रूप में एक नया वर्ग उभरा जिसके कारण देहाती इलाकों में भूस्वामियों के हाथ में रहने वाली राजनीतिक और सामाजिक सत्ता कमज़ोर पड़ गई। लेकिन मेदिनीपुर, बांकुड़ा और पुरुलिया जिलों में नक्सलवादी हिंसा जिंदा है।

नक्सलवादी गुटों की अन्य उग्रवादी संगठनों के साथ सांठ-गांठ से यह समस्या और जटिल बन गई है। ऐसे संकेत हैं कि पीडब्ल्यूजी कार्यकर्ताओं को एलटीटीई के कार्यकर्ताओं ने हथियार चलाने और देसी बमों के इस्तेमाल का प्रशिक्षण दिया है। उनकी नगालैंड के नेशनल सोशलिस्ट कौंसिल ऑफ नगालैंड (आईएम) के साथ भी समझ बनी है और दोनों ने एक-दूसरे का समर्थन करना शुरू किया है

अन्य राज्य

उड़ीसा में 2000 और 2001 के बीच नक्सलवादी गतिविधियां बढ़ीं। एमसीसी ने उत्तरी जिलों में अपने पैर जमाए हैं और पीडब्ल्यूजी ने दक्षिणी जिलों में अपनी स्थिति मज़बूत कर ली है। आंध्र प्रदेश, उड़ीसा सीमा पर विशेष क्षेत्र समिति के गठन से उड़ीसा में वामपंथी उग्रवाद में तेज़ी आई है। उत्तर प्रदेश के सोनभद्र, गोरखपुर, गाजीपुर, बलिया, चंदौली, और मिर्जापुर के पूर्वी जिलों में नक्सलवादी गतिविधियां देखी गई हैं। 20 नवंबर, 2004 को नक्सलवादियों ने चंदौली के जंगल में एक पुलिस जीप को ज़मीनी सुरंग के जरिये उड़ा दिया जिससे पीएसी के 13 और पुलिस के 4 कर्मचारी मारे गए।

महाराष्ट्र में गढ़चिरौली जिला नक्सलवाद से खास प्रभावित है हालांकि भंडारा, चंद्रपुर, गोंदिया और नांदेड़ जिलों में भी छोटी-मोटी घटनाएं हुई हैं।

कर्नाटक में कुद्रमुख इलाके में सरकार द्वारा आदिवासियों को वनभूमि से बेदखल करने के बाद नक्सलवादी गतिविधियों ने तुमकुर जिले में कर्नाटक राज्य रिज़र्व पुलिस के 6 पुलिस कर्मचारियों को मार डाला।

संभावनाएं

जिन कारणों से देश में नक्सलवाद को बढ़ावा मिला, दुर्भाग्यवश वे सभी आज भी मौजूद हैं। देशभर में ग़रीबी बनी हुई है। भूमि सुधारों पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। बेरोज़गारी बढ़ रही है। आदिवासियों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं हो रहा है। दूरदराज के इलाकों में सुशासन की हालत पतली है।

सरकार ने इस समस्या से निपटने के लिये एक व्यापक 14सूत्री योजना तैयार की है। इस योजना में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के आर्थिक-सामाजिक विकास पर विशेष ज़ोर दिया जा रहा है और राज्य सरकारों को निर्देश दिए गए हैं कि वे भूमि सुधार तेज़ी से लागू करें। बुनियादी सुविधाओं का विकास किया जा रहा है और पिछड़े तथा दूरदराज के इलाकों में युवा वर्ग को रोज़गार देने की योजना है। राष्ट्रीय जनजातीय नीति में आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा की व्यवस्था है। यह देखना ज़रूरी है कि इन उपायों के क्या परिणाम मिलेंगे। ❑

(लेखक सीमा सुरक्षा बल, उत्तर प्रदेश पुलिस तथा असम पुलिस के महानिदेशक रह चुके हैं)

हिन्दी माध्यम के लिए समर्पित एकमात्र संस्थान...

शिक्षा गुरू से न कि शिक्षक से...

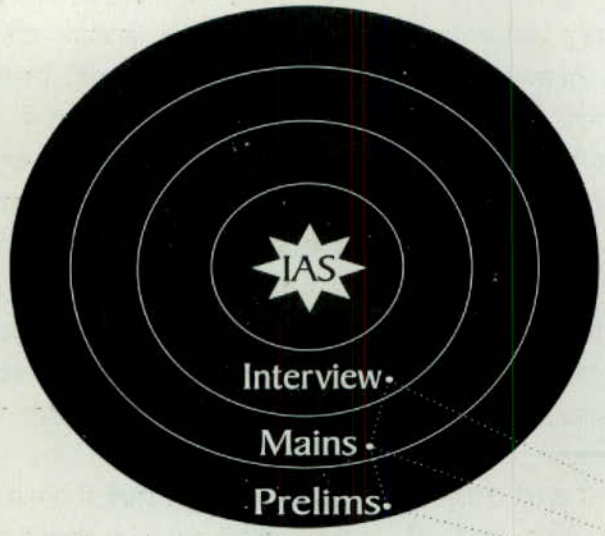

सफलता = रणनीति + परिश्रम

सफलता = संलयन (गुरू + छात्र)

परिश्रम ऊर्जा (छात्र/छात्रा)

कक्षा कार्यक्रम की विशिष्टता

- साक्षात्कार के लिए प्रशासकीय वैचारिकी का निर्माण।
- आलस्य, भटकाव, भूलने की प्रवृति, रूढ़िवादिता, अस्पष्टता का विखण्डन।
- एकाग्रता, तार्किकता, स्पष्टता, अभ्यास, परीक्षण तथानियमितता का विकास।
- उत्तर लेखन शैली का विकास।
- टिप्पणी के प्रश्न तथा निर्देशात्मक प्रश्न के उत्तर शैली में अंतर।
- व्याख्या, विवेचना, विश्लेषण, मूल्यांकन, परीक्षण आदि के निर्देश के अनुरूप (मुखर्जी मॉडल)
- प्रारम्भिक परीक्षा के लिए अधिमान्यता क्रम के आधार पर अध्यापन।
- सूचनात्मक, अवधारणात्मक, कारणात्मक प्रश्न को हल करने की विशिष्ट तकनीकि।
- निगेटिव मार्किंग से बचने की तकनीकि अधिकतम सही उत्तर के साथ।
- 20 टेस्ट युनिट के अनुरूप
- 20 टेस्ट की सीरिज
- पूर्ण पाठ्य सामग्री की उपलब्धता।

कक्षा कोर्स

अनिवार्य विषय

सामान्य अध्ययन

विशिष्टता में एकता

समसामयिक सामाजिक राष्ट्रीय मुद्दे	सुबोध झा
अन्तर्राष्ट्रीय संगठन तथा संबंध	सुबोध झा
इतिहास	अख्तर मलिक
राजव्यवस्था	महिपाल चारण हिलोड़ी
भूगोल	प्रवीण चोबे
विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी	दुर्गेश कुमार
सांख्यीकीय एवं तार्किक योग्यता	दुर्गेश कुमार
अर्थशास्त्र	राजीव रंजन झा

वैकल्पिक विषय

समाजशास्त्र	SUBODH JHA
दर्शनशास्त्र	डॉ. उपेन्द्र कुमार
लोक प्रशासन	महिपाल चारण हिलोड़ी

...+टेस्ट सीरिज, पत्राचार कोर्स उपलब्ध+...

SUBODH JHA CIVIL ACADEMY

A-14 Bhadari House (Besment) Near Chawla Restaurant Dr. Mukherjee Nagar Delhi-9

Ph.: 01165462132, 9873337566

YH/2/7/03

सही विकल्प की खोज

○ रजनीश

मणिपुर की महिला पत्रकार इरोम शर्मिला चानू पिछले छह साल से भी अधिक समय से भूख हड़ताल पर बैठी हैं। उनकी मांग है कि मणिपुर में लागू सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून, 1958 को अविलंब वापस लिया जाए। यह कानून सरकार को किसी भी इलाके को 'अशांत क्षेत्र' घोषित करने और वहां पर सेना या सशस्त्र बलों को तैनात करने का अधिकार देता है। साथ ही, यह कानून वहां तैनात सशस्त्र बलों को महज संदेह के आधार पर बिना वारंट के घर में घुसने, तलाशी लेने और गिरफ्तारी करने से लेकर गोली मारने तक का अधिकार देता है। मूल रूप में यह कानून अंग्रेजों ने आज़ादी की लड़ाई को कुचलने के मकसद से बनाया था जो 15 अगस्त, 1942 को लागू हुआ। आज़ादी के बाद 1958 में इसी कानून में थोड़ा रद्दोबदल कर सशस्त्र बल विशेषाधिकार अधिनियम के नाम से इसे भारतीय संसद द्वारा पारित किया गया। अस्तित्व में आने के लंबे समय बाद, वर्ष 1980 में इस कानून को मणिपुर सहित पूर्वोत्तर राज्यों में लागू किया गया जहां सरकार और व्यवस्था के खिलाफ सशस्त्र विरोध हो रहे थे। सशस्त्र विरोध से निपटने के लिये मणिपुर में तैनात असम राइफल्स के जवानों ने वर्ष 2000 में इसी कानून की आड़ में मालोम में 11 निर्दोष लोगों की जघन्य हत्या कर दी। आरोप यह भी लगा कि उन्होंने थांगजम मनोरमा नाम की युवती को हिरासत में लेकर बलात्कार करने के बाद गोलियों से भून डाला।

सरकार और व्यवस्था के विरुद्ध जहां तक सशस्त्र विरोध का प्रश्न है, ये मणिपुर के अलावा आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड और बिहार समेत देश के एक बड़े हिस्से में चल रहे हैं, जिन्हें 'नक्सली हिंसा' के नाम से पहचाना जाता है। आठ प्रतिशत से ऊपर की विकास दर के साथ सरपट भागती अर्थव्यवस्था के इस दौर में आखिर क्यों इतनी बड़ी संख्या में लोग अपने हाथों में हथियार थामने को मज़बूर हैं?

यह सर्वविदित तथ्य है कि मणिपुर सहित पूर्वोत्तर राज्यों, झारखंड और छत्तीसगढ़ में वे तमाम प्राकृतिक संसाधन उपलब्ध हैं, जिनके बूते आर्थिक विकास का पहिया घूमता है। फिर भी ग़रीबी, बेरोज़गारी और बदहाली की मार से ये इलाके ही सर्वाधिक त्रस्त हैं। वर्ष 2006-07 के बजट में पूर्वोत्तर राज्यों को 12,041 करोड़ रुपये की राशि आवंटित किए जाने के बावजूद मणिपुर पूर्वोत्तर के राज्यों में असम के बाद दूसरा सबसे निर्धन राज्य है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (1999-2000) के आकलन के अनुसार इस देश में कुल 2,602.50 लोग ग़रीबी रेखा से नीचे हैं। इनमें से 1,932.43 लाख ग्रामीण क्षेत्र के लोग हैं, जो अधिकांशत: हिंसा प्रभावित या कथित रूप से 'अशांत' राज्यों के निवासी हैं। इसी आकलन के हिसाब से 42.13 प्रतिशत कृषि मज़दूर ग़रीबी रेखा से नीचे हैं, जिनमें से ज्यादातर इन्हीं राज्यों से आते हैं। उपर्युक्त आकलन इस तथ्य का भी उल्लेख है कि रोज़गार के अवसरों में 0.98 प्रतिशत की दर से वार्षिक वृद्धि हो रही है, जबकि रोज़गार ढूंढने वालों की संख्या में हर साल 0.13 प्रतिशत की दर से इज़ाफा हो रहा है। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार इस देश में युवा बेरोज़गारों, जिनमें से अधिकांश इन्हीं राज्यों के हैं, की संख्या चार करोड़ के पार जा पहुंची है। ऐसी विषम परिस्थितियों के कारण इन क्षेत्रों में हिंसा और अशांति को पनपने का मौका मिला।

इन क्षेत्रों की दुर्दशा का एक अन्य पहलू यह भी है कि प्राकृतिक संसाधनों से परिपूर्ण होने के बावजूद यहां के लोग संसाधनों से प्राप्त होने वाले स्वाभाविक लाभों से वंचित रहे। मसलन, मणिपुर में बांस, फल, जल संसाधन और जड़ी-बूटियों की प्रचुरता के बावजूद वहां संबंधित उद्योगों का समुचित विकास आज़ादी के साठ वर्षों के बाद भी नहीं हो पाया है। और तो और, बुनियादी ढांचे के विकास से जुड़े रेल व सड़क परिवहन तक का भी समुचित विकास वहां नहीं हो पाया। म्यामां, चीन और बांग्लादेश जैसे पड़ोसी देशों के साथ मणिपुर का व्यापार आसान व स्वाभाविक होने के बावजूद इस दिशा में समुचित पहल नहीं की गई और उसे समृद्ध बनने के अवसर से वंचित किया गया, उल्टे उच्च व व्यावसायिक शिक्षण संस्थानों के अभाव के कारण यहां से बड़ी मात्रा में धन दूसरे राज्यों को बच्चों की पढ़ाई के खर्च के रूप में गया। यही सब आंध्र प्रदेश और बिहार आदि राज्यों (विशेषकर दूरदराज के ग्रामीण इलाकों) में हुआ

सरकार और व्यवस्था विरोधी हिंसक जनाक्रोश के पीछे पहचान का संकट और आत्मसम्मान का प्रश्न भी शामिल है। उदाहरण के तौर पर मणिपुर का एक तबका अपने देसी व विशिष्ट पहचान को बनाए रखने के प्रति खासा संवेदनशील है। वे मणिपुर में सशस्त्र बलों की तैनाती और आम आदमी, विशेषकर महिलाओं के साथ सशस्त्र बलों की दुर्व्यवहार को आर्थिक रूप से सबल कौम द्वारा कमज़ोर कौम को दबाने के रूप में देखते हैं। लगभग इसी किस्म की स्थिति बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़ और आंध्र प्रदेश आदि राज्यों में

नक्सलवादी गतिविधियों में कमी आई - केंद्रीय गृह सचिव

राज्यों को पुलिस बल बढ़ाने में मदद का आश्वासन

केंद्रीय गृह सचिव वी.के. दुग्गल ने कहा है कि नक्सल प्रभावित राज्यों को ग्रामीण क्षेत्रों में संचार सुविधाएं बढ़ाना चाहिए और विकास के लिये विभिन्न केंद्रीय स्कीमों की निधियों का अधिकतम उपयोग करना चाहिए। उन्होंने यह बात 13 नक्सल प्रभावित राज्यों की समन्वय समिति की बैठक की समाप्ति पर भुवनेश्वर में कही।

नक्सलवादी गतिविधियों में कमी पर संतोष जाहिर करते हुए श्री दुग्गल ने कहा कि विकास पर ध्यान दिए जाने से राज्यों को इस बुराई को नियंत्रित करने में मदद मिलेगी। उन्होंने कहा कि जिन राज्यों में औद्योगीकरण के कारण लोगों को विस्थापित होना पड़ रहा है वहां पुनर्वास की बेहतर नीतियां बनाई जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि सरकार का दृष्टिकोण यह है कि वामपंथी उग्रवादियों को सामाजिक मुख्यधारा में लाया जाए। लेकिन अगर उन्होंने निर्दोष लोगों या पुलिस बलों पर हमला किया तो सख्त कार्रवाई की जाएगी।

श्री दुग्गल ने कहा कि यह बुराई अब बिहार, झारखंड, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश, पूर्वी महाराष्ट्र और पश्चिम बंगाल तक ही सीमित है। 2005 में जहां 510 थाना क्षेत्रों में यह बुराई पाई जाती थी, वहीं अब यह इस साल घट कर 372 थानों में रह गई है।

विभिन्न राज्यों की मांगों का जबाब देते हुए उन्होंने पुलिस बल बढ़ाने, खुफिया विभाग मज़बूत करने और कार्मिकों को प्रशिक्षित करने के लिये केंद्र की अतिरिक्त सहायता का आश्वासन दिया।

उन्होंने फिर कहा कि अगर नक्सलवादी हथियार डाल दें तो सरकार उनके साथ बातचीत करने को तैयार है। उन्होंने सभी प्रभावित राज्यों से आंध्र प्रदेश की तरह आत्मसमर्पण नीति तैयार करने को कहा। ❑

दलित, पिछड़ी जातियों और ग़रीब लोगों के साथ सामंती तत्वों एवं अमीर लोगों द्वारा की जाती है। ऐसे में, आत्मसम्मान एवं पहचान का प्रश्न स्वाभाविक रूप से बड़ा हो जाता है।

अब सवाल यह है कि सरकार एवं व्यवस्था के हथियारबंद विरोध को क्या माना जाए? यकीनन एक लोकतांत्रिक व्यवस्था में हिंसात्मक विरोध को कतई सही नहीं माना जा सकता। लेकिन, इसे दुश्मनी से प्रेरित एक राष्ट्रद्रोही कार्रवाई मानकर खारिज भी नहीं किया जा सकता। ग़रीबी, बेरोज़गारी और विकास के लाभों से वंचित तथा स्वतंत्र पहचान व सम्मान की चाहत रखने वाले लोगों के विरोध को सिर्फ हिंसा के आधार पर बेकार नहीं ठहराया जा सकता। क्योंकि, ये विरोध यदि बेमतलब और फिज़ूल होते तो इतने लंबे समय तक इनका टिके रहना मुश्किल होता। जाहिर है, इन्हें जनता का कम या ज्यादा नैतिक समर्थन हासिल है।

लेकिन जनसमर्थन के तर्क पर हिंसक विरोध को लोकतांत्रिक व्यवस्था में छूट नहीं दी जा सकती। हिंसक विरोध की अगुवाई करने वाले समूहों व संगठनों को यदि अपने जनाधार पर भरोसा है तो उन्हें अपनी बात लोकतांत्रिक तरीके से विभिन्न लोकतांत्रिक मंचों पर, जिनमें पंचायत से लेकर संसद तक शामिल है, रखनी चाहिए और मौका मिलने पर अपनी ओर से समाधान पेश करना चाहिए। खासकर, पंचायती राज व्यवस्था के वर्तमान स्वरूप में बुनियादी स्तर पर जनहित में काम करने की ढेर सारी संभावनाएं बनी हैं। स्वयं शर्मिला ने विरोध दर्ज़ कराने का अहिंसक और गांधीवादी तरीका अपनाकर यह अहसास कराया है कि यही बेहतर विकल्प है। इतना ही नहीं, एक समय एक अतिवादी संगठन के रूप में पहचानी जाने वाली भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी-लेनिनवादी) आज संसदीय प्रक्रिया में भाग लेकर जनहित के मुद्दों को विभिन्न मंचों पर उठा रही है। और तो और, नेपाल के माओवादियों ने भी लोकतांत्रिक प्रक्रिया में भाग लेना स्वीकार कर यह मान लिया है कि जनता के हितों को साधने के लिये लोकतांत्रिक तरीका ही उचित है।

दूसरी ओर, सरकार को मणिपुर सहित विभिन्न राज्यों में चल रहें हिंसक विरोध को महज कानून-व्यवस्था का प्रश्न मानने की जिद छोड़ देनी चाहिए। यदि यह सिर्फ कानून व्यवस्था का मामला होता तो लोकसभा के भूतपूर्व अध्यक्ष पी.ए. संगमा के शब्दों में सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून के बावजूद मणिपुर सहित पूर्वोत्तर राज्यों में हिंसात्मक गतिविधियां घटने की बजाय बढ़ती नहीं। गृहमंत्री शिवराज पाटील द्वारा नक्सल प्रभावित राज्यों में 37 हजार अर्द्धसैनिक बलों की तैनाती के बाद वहां हिंसक विरोध बढ़ता नहीं बल्कि थम जाता। केंद्र सरकार द्वारा गठित जीवन रेड्डी समिति द्वारा सशस्त्र बल विशेषाधिकार कानून समाप्त करने तथा इसके मुख्य प्रावधान को गैरकानूनी गतिविधि (निरोधक) कानून में शामिल करने के साथ-साथ स्वयं प्रधानमंत्री द्वारा इस कानून में संशोधन की हामी भरने तथा गृहमंत्री द्वारा नक्सल प्रभावित राज्यों में तेज़ विकास सुनिश्चित करने और ग़रीबी दूर करने के विभिन्न उपायों की घोषणा से आशा की एक नयी किरण नज़र आने लगी है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

सच्चर समिति रिपोर्ट – एक मूल्यांकन

❍ इम्तियाज़ अहमद

किसी स्वस्थ राष्ट्र के लिये ज़रूरी है कि वहां रहने वाले सभी वर्ग साथ-साथ विकास करें। अगर उनका कोई वर्ग पिछड़ जाता है या विकास नीतियों का फायदा नहीं उठा पाता तो राष्ट्र को उनके बारे में सोचना ही चाहिए।

मुसलमानों की लगातार यह शिकायत रही है कि देश के विकास से उन्हें लाभ नहीं हुआ और वे लाभान्वित नहीं हुए हैं। प्रधानमंत्री ने सच्चर समिति की नियुक्ति की ताकि मुसलमानों की सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक स्थिति का मूल्यांकन किया जा सके।

मुसलमान एक बड़े और विविधतापूर्ण समुदाय हैं और देश के विभिन्न भागों में फैले हुए हैं। इस समुदाय के आर्थिक-सामाजिक मूल्यांकन में इस विविधता का ध्यान रखना पड़ेगा कि सिर्फ धार्मिक पहचान के ही आधार पर यह काम नहीं किया जा सकता। क्षेत्रीय और सामाजिक विविधता के आधार पर यह अलग-अलग हो सकता है। उदाहरण के लिये अगर किसी क्षेत्र का विकास नहीं हुआ है तो उस इलाके की सारी आबादी पिछड़ी होगी। इसी प्रकार, किसी समुदाय की सामाजिक हैसियत उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति से जानी जा सकती है। इसमें समुदाय के अंदर ही क्षेत्रीय और सामाजिक विभाजनों के कारण अंतर हो सकता है। अगर किसी समुदाय में निम्न सामाजिक वर्ग माना गया है तो उसकी स्थिति अन्य समुदायों की अपेक्षा बदतर होगी।

सच्चर समिति को इन सभी जटिलताओं का ध्यान रखते हुए आज के भारत में मुसलमानों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति की पूरी तस्वीर पेश करनी थी। इस समिति की रिपोर्ट में मोटे तौर पर निष्कर्ष निकाला गया है कि मुसलमानों का एक बड़ा वर्ग वंचित बना हुआ है और इस बात की ज़रूरत है कि सावधानी से ऐसी कोशिशें की जाएं कि उनमें मौजूद वंचित और पिछड़े वर्गों की आर्थिक-सामाजिक और शिक्षा संबंधी हालत बदले।

इस रिपोर्ट में ऐसा काफी कुछ है कि इसे विभिन्न लोग अलग-अलग तरीके से पढ़ें। यह स्वाभाविक है क्योंकि एक समुदाय के रूप में मुसलमानों को अलग ढंग से देखा जाता है और लंबे अरसे से उनके बारे में अलग तरह की व्याख्या की जाती रही है।

उदाहरण के लिये सच्चर समिति रिपोर्ट का यह बयान कि मुसलमानों की स्थिति अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मुक़ाबले कुछ बेहतर है, खासतौर से शिक्षा क्षेत्र में, इसे पढ़कर वे लोग विचलित हो सकते हैं जो यह दावा करते रहे हैं कि मुसलमान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के ऊपर रहे हैं। और यही वह पर्याप्त कारण बन सकता है जो संकेत देता है कि मुसलमानों के प्रति भेदभाव होता रहा है और यह भेदभाव खत्म करना सरकार का फर्ज़ है। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि अल्पसंख्यक समुदाय होने के नाते मुसलमानों के साथ कमोबेश भेदभाव होता रहा है।

अगर हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की मुसलमानों से तुलना करें तो देखेंगे कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों ने जीवन के कुछ क्षेत्रों में, जैसे शिक्षा के क्षेत्र में, जो बेहतर प्रदर्शन किया है उसका कारण यह नहीं है कि उसके प्रति भेदभाव कम हो गया है। अब भी उन्हें अछूत माना जाता है और उन्हें पहले से ज्यादा हेय और मुसलमानों से ज्यादा भेदभावपूर्ण माना जाता है। इससे संकेत मिलता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के लोग उन अवसरों से फायदा उठाने में कामयाब हुए हैं जो पहले उन्हें नहीं मिले थे। जाहिर है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को शिक्षा और रोज़गार के क्षेत्र में ज्यादा मौके मिले हैं। लेकिन जिन बाधाओं के कारण अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के समक्ष मुश्किलें आती थीं वे और मुश्किल हो गई हैं। इन परिस्थितियों में मुसलमानों का एक वर्ग इस स्वाभाविक निष्कर्ष पर पहुंचेगा कि आरक्षण के लाभ उन्हें भी दिए जाएं ताकि विकास प्रक्रिया से मिलने वाले फायदे में उनका भी हिस्सा बराबर हो।

इस रिपोर्ट की शायद सबसे खास बात यह है कि इसमें उन तत्वों पर चर्चा की गई है जो भारत के मुस्लिम समुदाय में ऐतिहासिक रूप से मौजूद रहे हैं। जहां एक तरफ यह विचार कि सभी मुसलमान एक हैं और उनमें किसी तरह का सामाजिक भेदभाव नहीं है, एक निराधार विश्वास साबित हुआ है, वहीं अन्य जातियों की तरह वे भी जाति और बिरादरियों में बंटे रहे हैं। पहले के सामाजिक लेखों को ध्यान में रखते हुए इस रिपोर्ट में मुसलमानों को उच्च वर्ग (अशरफ) और अन्य निम्न जातियों से आए मुसलमान (अजलफ) निम्न वर्ग (अरजल) पर चर्चा की गई है। भले ही इनके मोटे ब्यौरे नहीं हैं लेकिन इन्हें मिलने वाले विकास के लाभ अलग-अलग रहे हैं। अन्य शब्दों में अशरफ वह वर्ग है जो लाभ में रहा, अजफल काफी वंचित रहे और अरजल एकदम घाटे में है। रिपोर्ट का यह निष्कर्ष इस समुदाय के सामाजिक-आर्थिक और शिक्षा

संबंधी मूल्यांकन को प्रभावित करता है और जाहिर है कि वंचित मुसलमानों के लिये नये सिरे से कोशिश करने की ज़रूरत है।

विकास के लाभ सबको मिलें और सब समान बनें, इसके लिये सकारात्मक कार्रवाई ही प्रभावशाली तरीका है। सच्चर समित द्वारा अपनी रिपोर्ट में उठाए गए सवालों में से एक यह है कि क्या इस पूरे समुदाय के लिये सकारात्मक कार्रवाई की जानी चाहिए? समझदार मुसलमान वर्ग निश्चय ही इसका स्वागत करेगा। या फिर सकारात्मक कार्रवाई का लाभ उन वर्गों तक ही सीमित रखना चाहिए जो पिछड़े और वंचित रहे हैं क्योंकि उनकी आर्थिक-सामाजिक हैसियत कमज़ोर थी? इस सवाल पर समिति की सोच स्पष्ट नहीं है। सौभाग्य से मुसलमानों के मामले में सकारात्मक कार्रवाई का लाभ उन वर्गों को पहले ही मिल रहा है जिन्हें पिछड़े वर्गों में सूचीबद्ध किया गया था। एक विसंगति यह है कि अरजल मुसलमान जिनकी सामाजिक हैसियत अनुसूचित जातियों जैसी रही है, वैसी ही सामाजिक स्थिति में हैं जैसी अनुसूचित जातियों की थी। इन्हें अन्य पिछड़ा वर्गों के साथ जोड़ दिया गया है। इंसाफ और निष्पक्षता का तकाज़ा है कि अरजल मुसलमानों को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को मिल रहे जिन लाभों से वंचित किया गया है वह उन्हें दिए जाएं क्योंकि वे भी वैसे लाभ पाने के हक़दार हैं। साथ ही, अगर मुसलमान और पिछड़े वर्ग समूह पिछड़ गए हैं या विकास लाभों से वंचित रह गए हैं तो उन्हें भी अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिया जाना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि उन्हें भी विकास के लाभ मिलने लगेंगे। मुसलमानों के अन्य समुदायों के लिये जिनमें से अनेक विकास के लाभों से उतने वंचित नहीं हैं, ज़रूरी शर्त यह होगी कि इस बात पर बेहतर ज़ोर दिया जाए। लेकिन साथ ही, इस रिपोर्ट में ज़ोर देकर कहा गया है कि सार्वजनिक नीति पत्रों के जरिये सरकार यह सुनिश्चित करे कि जिन पूर्वाग्रहों और भेदभाव के कारण ये समूह पिछड़े रहे हैं, उन्हें दूर किया जाए।

कुल मिलाकर सच्चर समिति की रिपोर्ट के निष्कर्ष महत्वपूर्ण हैं और इन पर कार्रवाई की जानी चाहिए। समिति ने जिस प्रकार के तौर-तरीके अपनाए हैं, उससे कई और सवाल सामने आए हैं जिन पर विचार करने की ज़रूरत है। अगर इन सवालों के जवाब न दिए गए और मुद्दे न सुलझाए गए तो इस बात का ख़तरा है कि यह मुद्दा गैरज़रूरी सांप्रदायिकता के विवाद में फंसकर रह जाएगा।

एक सवाल विभिन्न समुदायों के बीच तुलना के सिद्धांत को लेकर है। समिति के सामने यह फैसला करने के लिये क्या सिद्धांत था कि हर समुदाय को अलग-अलग रूप से देखने की ज़रूरत है? क्या उसे मुसलमानों के उन वर्गों और परिवारों की उन खास बातों पर ध्यान नहीं देना चाहिए जिनसे उनका स्तर जाहिर होता है और जिसके कारण उनमें असंतोष है? कामयाबी या नाकामयाबी और ख़ासतौर से वे किस स्तर के विकास तक पहुंच पाए हैं, यह केवल सामाजिक-आर्थिक समुदाय का काम नहीं है। यह संपत्तियों और संसाधनों का भी काम है जो ऐसे परिवार या समुदाय जुटा पाते हैं क्योंकि आर्थिक-सामाजिक विकास इन्हीं पर निर्भर करता है। जिन समूहों के एक जैसे संसाधन होते हैं, उनका आर्थिक-सामाजिक विकास स्तर एक जैसा होने की संभावना है। अगर आंकड़े जाहिर करते हैं कि एक जैसे संपत्ति और संसाधनों के बावजूद मुसलमानों के कुछ वर्गों की उपलब्धियां अलग ढंग की रहीं, तो यह चिंता की बात होगी। यह एक अहम सवाल होगा क्योंकि इसके साथ एक गंभीर मुद्दा जुड़ा है। मुद्दा यह है कि वे खास बातें जो मुसलमानों और अन्य सामाजिक-धार्मिक समुदायों में पाई जाती हैं, धर्म और जातीय-धार्मिक पहचान के कारण हैं या फिर किसी अन्य स्पष्ट या अस्पष्ट कारण से। अन्य शब्दों में अगर यह बात सामने आती है कि यह अंतर जातीय-धार्मिक पहचान के कारण है तो इसका मतलब यह है कि उन्हें अलग-थलग करने और अन्य लोगों से हट कर अलग तरह का व्यवहार करके उनकी हालत सुधारनी होगी। दूसरी तरफ, अगर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सामाजिक-आर्थिक विकास जातीय धार्मिक पहचान का काम नहीं बल्कि संपत्ति और संसाधनों का काम है, तो जाहिर है कि पूरा ज़ोर संसाधनों के सृजन पर देना होगा और ऐसा सामान्य आर्थिक विकास के जरिये ही हो सकता है।

दूसरा सवाल अर्थव्यवस्था, राजनीति और शिक्षा जैसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत से जुड़ा है। मुसलमानों के कल्याण पर चर्चा के दौरान इस प्रकार की दलीलें दी जाती हैं कि उनकी आबादी के हिसाब से उनका प्रतिनिधित्व होना चाहिए। आर्थिक-सामाजिक क्षेत्रों में मुसलमानों की हैसियत का मूल्यांकन करते समय सच्चर समिति ने इस सिद्धांत की कई बार चर्चा की है। यह सिद्धांत कहां से आया? भारतीय राजनीति में एक समय था जब आबादी के हिसाब से लाभों का बंटवारा करने की बात कही जाती थी। यही वह सिद्धांत है जिसके आधार पर छोटे से नुकसान को भी एक या दूसरे समुदाय के लिये नफ़े या नुकसान की बात मानी जाती थी।

भारत के संविधान में समता और अवसरों की समानता को राष्ट्रीय जीवन का मार्गदर्शक आधार माना गया। इस सिद्धांत के अनुसार राज्य की भूमिका यह सुनिश्चित करना भर नहीं है कि सार्वजनिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में सभी समुदायों का उनकी आबादी के हिसाब से प्रतिनिधित्व हो, बल्कि यह कि सभी समुदायों को वर्तमान संपत्ति और लाभों के मामलों में अंतर के बावजूद विकास और प्रगति के लिये समान अवसर मिले।

समानता की घोषणा करते समय भी संविधान ने इस बात को मान्यता दी कि विभिन्न समुदाय (सच्चर समिति रिपोर्ट की भाषा में सामाजिक-धार्मिक समुदाय) ऐतिहासिक रूप से विभिन्न स्तर के लाभ प्राप्त करते रहे हैं जिससे वास्तविक जीवन में असमानता मौजूद रही है। संवैधानिक निर्देशों के अंतर्गत कुछ हद तक जितने भी कानून पास किए गए उन्हें अगर कम या खत्म करने की कोशिश नहीं

सच्चर समिति की सिफ़ारिशें

सच्चर समिति ने मुसलमानों के उत्थान के लिये कई उपाए सुझाए हैं। मुस्लिमों को तीन वर्गों अशरफ, अजलफ और अरजल में वर्गीकृत करते हुए सिफ़ारिश की गई है। समिति ने एक ऐसी व्यवस्था बनाने की अनुशंसा की है जिसमें मुस्लिमों से भेदभाव की शिकायतें, रोज़गार के अवसरों, आवास ऋण की उपलब्धता या स्कूलों में दाखिले से संबंधित शिकायतें सुनी जाएं।

प्रमुख सिफ़ारिशें

- मुस्लिमों के सबसे पिछड़े समुदाय के लिये अनुसूचित जाति के समान आरक्षण।
- नौकरियों की साक्षात्कार समितियों और भर्ती बोर्डों में मुस्लिम समुदाय का प्रतिनिधित्व।
- लोकतांत्रिक प्रक्रिया और सरकार में मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व बढ़ाने के प्रयास।
- मदरसों की डिग्री को मान्यता प्रदान की जाए।
- मदरसों को हायर सेकेंड्री स्कूल से जोड़ने पर विचार हो।
- समान अवसर आयोग की स्थापना की जाए।
- मौलाना आज़ाद फाउंडेशन का सालाना फंड 200 करोड़ से बढ़ाकर 1,000 करोड़ रुपये किया जाए।
- नेशनल डेटा बैंक बनाया जाए।
- अल्पसंख्यकों के लिये बनने वाली योजनाओं की निगरानी के लिये एक स्वायत्तशासी निगरानी प्राधिकरण बनाया जाए।
- विभिन्न सरकारी समितियों में अल्पसंख्यकों को नामित किया जाए।

अहम आंकड़े

- कुल मुस्लिम समुदाय में अन्य पिछड़ा वर्ग की संख्या 40.7 फीसदी।
- देश की कुल अन्य पिछड़ा वर्ग जनसंख्या में 15.7 फीसदी।
- सुरक्षा एजेंसियों में मुस्लिमों की संख्या महज 3.2 फीसदी।
- भारतीय प्रशासनिक सेवा में 3 फीसदी।
- भारतीय विदेश सेवा में 1.8 फीसदी।
- सार्वजनिक सेवाओं को छोड़कर प्रतिनिधित्व 4.9 फीसदी।

की तो संपत्ति अधिकार और विशेष लाभों को कम करके सीमित करने की कोशिश की। साथ ही, इन कानूनों के जरिये सामाजिक जुड़ाव के बावजूद हरेक के लिये जीवन के अवसर समान बनाने की भी कोशिश की गई। कम से कम कुछ मामले ऐसे भी हैं, जिनमें उल्टे भेदभाव का सिद्धांत अपनाया गया। ऐसा उन मामलों में किया गया जहां महसूस किया गया कि ऐसा किए बिना जीवन के अवसर समान नहीं हो पाएंगे।

यह भी संभव है कि पिछले 60 वर्षों में सरकार संविधान की सही आत्मा के अनुसार काम नहीं कर पाई जिसके कारण समानता के अवसर सभी समुदायों को नहीं मिल पाए। मुसलमान ऐसे समुदायों में से एक हो सकते हैं। यह भी संभव है कि कुछ ऐसे समुदायों ने जिनकी सरकार पर ज्यादा पकड़ रही है, जानबूझ कर कुछ अन्य समुदायों के अवसरों को सीमित कर दिया। भारतीय समाज की एक दुविधा यह रही है कि सरकार धर्मनिरपेक्ष है लेकिन समाज सांप्रदायिक और संप्रदायपंथी है। इन परिस्थितियों में इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि कुछ प्रबल वर्गों द्वारा अन्य वर्गों के अवसरों को सीमित या बाधित किए जाने की संभावना है।

जब तक बाधाएं मौजूद हैं, सरकार को इन्हें दूर करने की जिम्मेदारी सौंपी जा सकती है। राजनीतिक और कानूनी दबाव के जरिये सरकार से यह जिम्मेदारी निभाने को कहा जा सकता है। प्रधानमंत्री ने सच्चर समिति की नियुक्ति यह जानने के लिये की कि मुसलमानों द्वारा बार-बार की जाने वाली उन शिकायतों में कि उनके साथ निष्पक्ष व्यवहार नहीं हो रहा है, कितना दम है। समिति की इन सिफ़ारिशों और निष्कर्षों से संकेत मिलता है कि मुसलमानों के रास्ते में रुकावटें मौजूद हैं और उन्हें दूर किए जाने की ज़रूरत है। लेकिन, साथ ही इस रिपोर्ट को सार्वजनिक करने से इस बात को बढ़ावा नहीं मिलना चाहिए कि हम फिर उसी पुरानी सोच में पड़ जाएं कि समता और अवसर की समानता की जगह तुल्यता ही प्रमुख सार्वजनिक मांग बन जाए। ❑

(लेखक जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली के पूर्व प्रोफेसर हैं और मुस्लिम विषयों पर काम कर रहे हैं)

अल्पसंख्यकों के लिये बनी योजनाओं को तरजीह दी जाए

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने गत 9 दिसंबर को कहा कि संसाधनों पर अल्पसंख्यकों और खासकर मुसलमानों के लिये बनने वाली योजनाओं की दावेदारी सबसे पहले होनी चाहिए ताकि विकास के लाभ उन तक समान रूप से पहुंच सके।

प्रधानमंत्री 11वीं पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यपत्र के मसौदे पर विचार और उसके मंजूरी दिलाने के लिये हुई राष्ट्रीय विकास परिषद की 52वीं बैठक का उद्घाटन कर रहे थे। उन्होंने कहा कि हमें यह सुनिश्चित करने के लिये रचनात्मक योजनाएं तैयार करनी होंगी कि अल्पसंख्यक, खासकर मुसलमान विकास के लाभ समान रूप से हासिल करने के लिये सशक्त बनें।

उल्लेखनीय है कि प्रधानमंत्री ने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग की बैठक के दौरान सरकारी और निजी नौकरियों में अल्पसंख्यकों की उचित हिस्सेदारी का समर्थन किया था। उन्होंने कहा कि योजना में कृषि क्षेत्र के विकास में आड़े आने वाली कमज़ोरियों को दूर करने को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए। हम जब तक कृषि क्षेत्र को फिर से मज़बूत नहीं बनाते तक तब समग्र विकास की आशा ही नहीं कर सकते। जिस कृषि क्षेत्र पर देश की आबादी निर्भर है उसकी विकास दर 1990 के दशक के मध्य से अब तक दो फीसदी सालाना से भी कम रही है।

ग्यारहवीं योजना अवधि के लिये औसत सालाना विकास दर नौ फीसद को हासिल करने के लिये की जाने वाली पहल का ब्यौरा देते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि इसके लिये बुनियादी ढांचा क्षेत्र में निजी निवेश होगा।

योजना के उद्देश्यपत्र में विकास दर को दस फीसद या उससे अधिक तक पहुंचाने की राह में इस क्षेत्र को प्रमुख बाधा माना गया है। वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने ग्यारहवीं योजना के लिये अधिक संसाधन जुटाने के लिये पेंशन, बैंकिंग और सीमा विधेयक की मंजूरी में मुख्यमंत्रियों का समर्थन मांगा।

उन्होंने कहा कि केंद्र सरकार राजस्व और गैर कर्ज़ प्राप्तियां बढ़ाने के लिये हर संभव कोशिश करेगी और ऐसा करने की प्रक्रिया में हम राजकोषीय अनुशासन कायम करेंगे और योजना के वित्त पोषण से जुड़ी वैध ज़रूरतों को पूरा करने के लिये पर्याप्त राजकोषीय गुंजाइश रखेंगे। इस रास्ते पर चलकर हम ग्यारहवीं योजना के आकार के अनुकूल वित्तीय उत्तरदायित्व और बजटीय प्रबंधन कानून का अनुपालन कर सकेंगे।

योजना आयोग के उपाध्यक्षक मोंटेक सिंह ने कहा है कि 11वीं योजना में पांच फीसद अधिक निवेश करने का लक्ष्य तय किया गया है। अधिकांश निवेश निजी क्षेत्र में आने की उम्मीद है। उन्होंने कहा कि कौशल विकास अभी भी बड़ी चुनौती है जिसके लिये 2007 में कौशल विकास मिशन की शुरुआत की जाएगी।

कृषि क्षेत्र में फिर से जान फूंकने पर ज़ोर देते हुए कहा कि राष्ट्रीय रेनफेड क्षेत्र प्राधिकार वाटरशेड प्रबंधन के कार्यक्रमों के लिये महत्वपूर्ण जानकारियां उप्लब्ध कराएगा। उन्होंने राज्यों से कहा कि सहकारी कर्ज़ व्यवस्था को पुनर्जीवित करने के लिये वैद्यनाथन समिति की सिफ़ारिशों को लागू करें।

उन्होंने कहा कि सर्वशिक्षा अभियान के तहत धन दिए जाने की प्रक्रिया में केंद्र और राज्यों की हिस्सेदारी का अनुपात 75 और 25 से बदलकर 50-50 फीसद किया जाएगा। राज्यों को इस अभियान में हिस्सेदारी बढ़ानी होगी। योजना आयोग के उपाध्यक्ष ने कहा कि बुनियादी ढांचा परियोजनाओं के वित्तपोषण के लिये सार्वजनिक-निजी साझेदारी पर भरोसा करना पड़ेगा क्योंकि केवल सार्वजनिक क्षेत्र बुनियादी ढांचा विकास के लिये ज़रूरी 350 अरब डालर की निवेश आवश्यकता पूरी करने में सक्षम नहीं है।

उन्होंने बताया कि 22,000 करोड़ रुपये के निवेश से 2012 तक 40 हजार किलोमीटर लंबे राजमार्गों का विकास किया जाएगा। इसके लिये सार्वजनिक निजी साझेदारी के प्रारूप छूट समझौते को मंजूरी दे दी गई है। राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकार की पुनर्रचना की जा रही है। ❑

जम्मू-कश्मीर के विकास हेतु निजी क्षेत्र को लाएं

जम्मू-कश्मीर की ढांचागत समस्याओं के अध्ययन हेतु प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह द्वारा स्थापित कार्यबल ने नेशनल हाइड्रोइलेक्ट्रिक पावर कार्पोरेशन से एक 390 मेगावाट ऊर्जा परियोजना राज्य को स्थानांतरित करने, 1750 करोड़ रुपये की सड़क विकास योजना और श्रीनगर के लिये एक सैटेलाइट व्यापारिक केंद्र की अनुशंसा की है।

दो निजी क्षेत्र द्वारा भारी निवेश के रूप में प्राप्त सफलता जम्मू-कश्मीर के विकास के लिये प्रधानमंत्री द्वारा कार्यबल के नुस्खे का एक भाग है। राज्य में सुरक्षा हालात को लेकर निवेशकों की नकारात्मक सोच के कारण विकास क्रम के बहुतेरे लाभों से जम्मू-कश्मीर अछूता रह जाता है। प्रधानमंत्री के आर्थिक सलाहकार समिति के अध्यक्ष और भारतीय रिज़र्व बैंक के पूर्व गवर्नर सी. रंगराजन की अगुवाई वाले पैनल ने कहा है कि कुछ बड़े और मध्यम औद्योगिक घरानों को राज्य में निवेश करने हेतु आकर्षित करना आवश्यक है।

राज्य को राष्ट्रीय और वैश्विक अर्थव्यवस्था की मुख्य धारा में लाने हेतु पैनल की अनुशंसा में शीघ्र लाभ देने वाली परियोजनाओं को लागू करना और दीर्घकालिक आर्थिक विकास हेतु आधार निर्माण शामिल है।

घरेलू और विदेशी निवेश आकर्षित करने हेतु राज्यों के बीच की प्रबल प्रतियोगिता को इंगित करते हुए पैनल ने महसूस किया कि कमज़ोर संरचनात्मक सुविधा और मुख्य बाज़ारों से दूरी के कारण जम्मू-कश्मीर बहुत अशक्त था। राज्य की कमज़ोर आर्थिक गतिविधियों, कम रोज़गार और आय के कम साधन तथा पिछड़ेपन में फंसे होने के बहुतेरे कारक हैं। पैनल ने उपायों के रूप में एक विशेष निवेश क्षेत्र की स्थापना का सुझाव दिया है।

अपनी रिपोर्ट में सी. रंगराजन समिति ने राज्य के स्वास्थ्य, दूरसंचार, सड़कों और पर्यटन क्षेत्रों में सुधार तथा विकसित वित्तीय नीतियां और छवि निर्माण की अनिवार्यता की बात भी कही है।

राज्य में ऊर्जा की समस्या को देखते हुए पैनल ने सुझाया है कि दुलहस्ती हाइड्रोइलेक्ट्रिक परियोजना और 1000 मेवा. बुसर भंडारण योजना एनएचपीसी से राज्य को स्थानांतरित की जाए। पैनल ने आगे कहा कि पनबिजली के विकास हेतु नीति बनाने की तत्काल आवश्यकता है। कार्यबल ने यह भी इंगित किया कि यद्यपि पर्यटन में वृद्धि हो रही है परंतु यह अब भी उग्रवाद आरंभ होने से पहले के स्तर तक नहीं पहुंचा है। उस स्तर तक पहुंचने हेतु हवाई अड्डे के आधुनिकीकरण तथा तेज सड़क एवं रेल परियोजनाएं आवश्यक हैं।

पुराने कृषि तकनीकों के बारे में पैनल ने कहा कि बेहतर छंटाई, ग्रेडिंग, पैकेजिंग और शीत भंडारण सुविधाओं की श्रृंखला की ज़रूरत है। जम्मू-कश्मीर सड़क घनत्व के मामले में देश के सबसे कम घनत्व वाले राज्यों में से एक है इसलिये पैनल ने उच्च पथ कॉरीडारों के विस्तार का सुझाव दिया है।

पैनल ने ग्रामीण जम्मू-कश्मीर में संरचना के पुनरुत्थान पर भी बल दिया है। पैनल का मानना है कि इन सुधारों से शांति स्थापना में योगदान मिलेगा।

एक अल्पावधि उपाय यह सुझाया गया है कि वर्तमान में सुरक्षा बलों के कब्ज़े वाले होटलों को खाली कराया जाए तथा उन्हें उनके मालिकों को लौटा दिया जाए। उन्हें शीघ्र नवीकरण हेतु सहज ऋण दिए जाएं। आकलनों के अनुसार राज्य में वर्ष 2010 तक 6,000 अतिरिक्त बिस्तरों की तथा वर्ष 2015 तक और 3,000 बिस्तरों की ज़रूरत है। आवासीय सुविधाओं के विकास और नये कमरों के निर्माण तक राज्य सरकार द्वारा पहलगाम में शुरू की गई तंबू शिविरों के द्वारा ज़रूरतों को पूरा किया जाना चाहिए। पर्यटन में वृद्धि के लिये सुरक्षा को लेकर विश्वास पैदा करना बहुत महत्वपूर्ण चुनौती है। इस बात पर बल देते हुए कार्यबल ने आगे के पर्यटन संबंधी दृष्टि दस्तावेज़ में शामिल अन्य अनुशंसाओं में कहा है कि प्रमुख होटल समूहों की मदद से कुशलता और सेवा स्तर को बढ़ाना, आधुनिकतम सुविधाओं के साथ शेरे-कश्मीर परिसर को उन्नत करना, विरासत पर्यटन को बढ़ावा तथा पर्यटन की वृद्धि पर खर्च करना जरूरी है।

राज्य में सड़कों का घनत्व देश में सबसे कम है तथा वर्तमान सड़कें बेहद खराब रूप में हैं। रिपोर्ट में रेखांकित किया गया है कि उच्चपथ कॉरीडोरों के सुधार और विस्तार की ज़रूरत के साथ ही शहरों और गांवों को आंतरिक सड़क नेटवर्क द्वारा मुख्य कॉरीडोरों से जोड़ना भी समान रूप से महत्वपूर्ण है। शेष देश के कारगर वित्तीय संघवाद की पद्धतियां और प्रक्रियाएं जम्मू-कश्मीर के लिये भी अनिर्वाय रूप से आदर्श नहीं हैं। प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह को पिछले दिनों सौंपे गए अपनी रिपोर्ट में कार्यबल ने कहा है कि जम्मू-कश्मीर के विकास का स्वरूप और प्रक्रिया राज्य की अनूठी ऐतिहासिक, सांस्थानिक तथा राजनैतिक कारकों को ध्यान में रखकर ही डिजाइन किया जाना चाहिए।

उन्हें प्रधानमंत्री द्वारा मार्च में गठित कार्यबल ने सड़कों, ऊर्जा और दूरसंचार जैसी संरचना, पर्यटन तथा बागवानी में रोज़गार सृजन की पहलों और स्वास्थ्य जैसी संरचना पर ध्यान केंद्रित किया है। ❑

विकास की चुनौतियां

● वर्तमान भौतिक संपत्तियों की पुनर्रचना और अनुरक्षण ● विस्तृत वित्तीय समायोजन ● ऊर्जा और सड़क जैसे भौतिक ढांचे में निवेश ● स्वास्थ्य और शिक्षा जैसे सामाजिक ढांचे में निवेश ● निजी निवेश के लिये प्रेरक ● संतुलित क्षेत्रीय विकास

सलाम, नमस्ते! कश्मीर घाटी में संगीत

कश्मीर में चौबीसों घंटे प्रसारण वाला एफएम स्टेशन (बिग एफएम) चालू हो गया है और सवेरे-सवेरे कश्मीर के पहले रेडियो जॉकी स्माइल भाई 'गुड मार्निंग कश्मीर, सलाम नमस्ते कश्मीर' कह कर अपने श्रोताओं से रू-ब-रू हो रहे हैं।

कश्मीर घाटी में जहां ज़िंदगी शाम छह बजे ही ठहर जाती है, ऐडलैब फिल्म्स और अनिल धीरुभाई अंबानी समूह द्वारा शुरू किए गए इस चैनल से जीवनशैली बदल सकती है।

इस एफएम स्टेशन के प्रमुख, परवेज मलिक ने कहा कि "अशांतिग्रस्त घाटी के लोगों के लिये यह एक बड़ी राहत है। जिस घाटी में लोग शाम छह बजे ही सो जाते थे, वहां अब लोग रातभर संगीत का आनंद उठा सकते हैं। जहां बिजली भी नहीं होती, वहां रेडियो एक अच्छा विकल्प बनेगा।

भले ही शुरू-शुरू में फोन-इन प्रोग्राम न हो रहे हों, इस चैनल को शुरू किए जाने के तीन घंटे के अंदर 600 एसएमएस प्राप्त हुए। अगले कुछ ही घंटों में 300 संदेश और मिले।

रेडियो कश्मीर के परिसर में एक अस्थायी इमारत में स्थित यह रेडियो स्टेशन कंटेनर जैसे दिखने वाले दो कमरों से चलाया जा रहा है। प्रारंभ के कुछ महीनों तक इसे तीन उद्घोषक और कुछ इंजीनियर मिल कर संचालित करेंगे। करीब 300 युवकों की स्वर परीक्षा लेने के बाद इज़हार ऋषि का चयन किया गया है। वह 'बिग नून चाय' कार्यक्रम चलाते हैं जो बिग एफएम के 45 अन्य केंद्रों से चल रहे प्रात:कालीन कार्यक्रम 'बिग चाय' की तर्ज़ पर संचालित किया जाता है। अमरीका के एक रेडियो इंजीनियर डानोडे द्वारा कठोर प्रशिक्षण दिए जाने के बाद ऋषि को 'स्माइल भाई' नाम दिया गया। उन्हें कश्मीरियों के चेहरे पर मुस्कान लाने का काम सौंपा गया है। 'नून चाय' के बाद महिलाओं का कार्यक्रम होता है जिसमें बाहरी अतिथि एंकर (प्रस्तुतकर्ता) से बातचीत करते हैं। हर शाम तीन घंटे तक संगीत का कार्यक्रम पेश किया जाएगा जिसे एक महिला उद्घोषिका पेश करेंगी। बाकी दिन में और पूरी रात पहले से रिकार्ड किया हुआ कार्यक्रम अथवा फिल्म संगीत प्रसारित किया जाएगा। मलिक ने कहा कि इस इस स्टेशन के विकास के साथ ही कार्यक्रम भी बढ़ते जाएंगे। ❑

विश्व के सबसे बड़े ट्युलिप के बाग का घर

बम विस्फोटों और कार्डाइट तथा ट्राईनाइट्रोग्लीसरिन की बदबू के बीच भी कश्मीर में बड़ी मात्रा में फूलों का खिलना जारी है। नागरिक और प्रकृति प्रेमी यह जानकर प्रसन्न होंगे कि श्रीनगर का सिरज बाग़ दुनिया के सबसे बड़े ट्युलिप बाग़ों में से एक के रूप में उभर रहा है। यहां अगले वसंत में 2.50 लाख ट्युलिप खिलेंगे।

ट्युलिप कश्मीर में उगाया जाता है। यह भारत का एकमात्र स्थान है, जहां प्राकृतिक वातावरण में मार्च से मई के बीच ये फूल खिलते हैं। हाल के दिनों में फसल बदलने वाले बहुत सारे किसानों द्वारा ट्युलिप की खेती को आकर्षक विकल्प माना जाने लगा है।

श्रीनगर का ट्युलिप बाग़ विगत दो वर्षों से पर्यटकों हेतु खोल दिया गया है और यह घाटी में अब भी पर्यटकों तथा प्रकृति प्रेमियों के लिये आकर्षण का केंद्र बना हुआ है।

विगत एक वर्ष में बाग़ों और पार्कों के चारों ओर अतिक्रमण नियंत्रण के लिये विभिन्न कदम उठाए गए हैं और पार्कों तथा बाग़ों के बेहतर रखरखाव के लिये अभियान चलाया गया है। इसके परिणामस्वरूप अप्रैल, मई तथा जून के महीनों में यहां रिकार्ड संख्या में पर्यटक आए और विभाग को इस वर्ष कश्मीर के प्रसिद्ध बाग़ में टिकटों से 75 लाख रुपये की आय हुई।

'स्वर्ग' की खूबसूरती का रहस्य इसके बाग़ों में छिपा होता है- यह कहते हुए मुख्यमंत्री गुलाम नबी आजाद ने संबंधित अधिकारियों को बाग़ों और पार्कों की 'ए', 'बी' तथा 'सी' श्रेणियां बनाने की सलाह दी ताकि उनका रखरखाव तथा सौंदर्यीकरण नियमित रूप से हो सके।

श्री आजाद ने विभाग से सभी सरकारी उच्च विद्यालयों में अगले वर्ष चिनार के पौधों की बेहतर आपूर्ति और वृक्षारोपण सुनिश्चित करने के लिये कहा। उन्होंने बताया कि सभी विद्यालयों के अधिकारियों को अपने परिसर में चिनार तथा अन्य पौधे लगाने की सलाह दी गई है। उन्होंने राज्य में फूलों के उत्पादन के क्षेत्र में निवेश करने हेतु निजी क्षेत्र के उद्यमियों को प्रोत्साहित करने की सलाह भी दी। ❑

प्रधानमंत्री का पाकिस्तान के साथ

शांति समझौते का आह्वान

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने शांति संबंधी राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ के चार-सूत्री फार्मूले का स्वागत किया है और स्थायी शांति व समृद्धि के एक माध्यम के रूप में द्विपक्षीय समझौते के अपने प्रस्ताव को एक बार फिर दोहराया है।

भारत-पाक संबंधों से जुड़ी अपनी दृष्टि को स्पष्ट करने के साथ-साथ पाकिस्तान की नयी सोच का स्वागत करते हुए उन्होंने कहा कि दोनों देशों को खुले दिमाग से काम करने और आपस में भरोसा बढ़ाने की आवश्यकता है।

अमृतसर में एक रैली को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि भारत पकिस्तान के साथ बेहतर संबंध कायम करने की दिशा में काम कर रहा है, लेकिन यह कोई समयबद्ध प्रक्रिया नहीं है।

प्रधानमंत्री ने कहा, "दोनों मुल्कों के हित परस्पर जुड़े हुए हैं और अपने सामूहिक हितों के बारे में सोचने के लिये हमें अतीत को पीछे छोड़ने की आवश्यकता है।"

डॉ. सिंह ने विश्वास व्यक्त किया कि ऐसा करना संभव है। उन्होंने कहा, "यदि हम दृढ़प्रतिज्ञ और लक्ष्य के प्रति समर्पित हैं, तो मुझे पक्का यकीन है कि हम अपनी मंजिल ज़रूर प्राप्त कर लेंगे।"

शांति, सुरक्षा एवं मैत्री की एक संधि की आवश्यकता पर ज़ोर डालते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि इससे हमें अपने सामूहिक हितों को साधने तथा क्षेत्र में स्थायी शांति व समृद्धि का आधार स्थापित करने में सहूलियत होगी।

कश्मीर समस्या के समाधान के लिये राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ के चार-सूत्री फार्मूले, जिसमें अविभाजित राज्य के विसैन्यीकरण एवं संयुक्त प्रबंधन का प्रस्ताव है, का उल्लेख करते हुए डॉ. सिंह ने कहा, "मैंने पिछले सप्ताह पाकिस्तान द्वारा व्यक्त किए गए कुछ नये विचारों व सोच के बारे में पढ़ा है।"

विचार मंथन की प्रक्रिया में इस प्रकार के नये विचारों का स्वागत करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा, "यदि दोनों पक्ष प्रत्येक समस्या को सुलझाने की दिशा में खुले दिमाग और मैत्रीपूर्ण भाव से काम करें तो सभी लंबित मुद्दों का समाधान संभव है।"

उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि दोनों पड़ोसी देश शांति के पथ पर अग्रसर हो सकते हैं। उन्होंने कहा, "इसकी पूरी गुंजाइश है और हम इसे संभव बना सकते हैं। यह एक सपना नहीं, बल्कि हक़ीक़त बन सकती है।"

प्रधानमंत्री ने कहा, "मुझे पूरा यकीन है कि यदि हम शांति के इस पथ पर आगे बढ़ते रहे तो अमृतसर एक बार फिर व्यापार और वाणिज्य के एक केंद्र के रूप में अपनी ख्याति अर्जित कर सकता है। मेरा यह दृढ़विश्वास है कि ऐसा संभव है और हम इसे साबित कर दिखाएंगे।" ❑

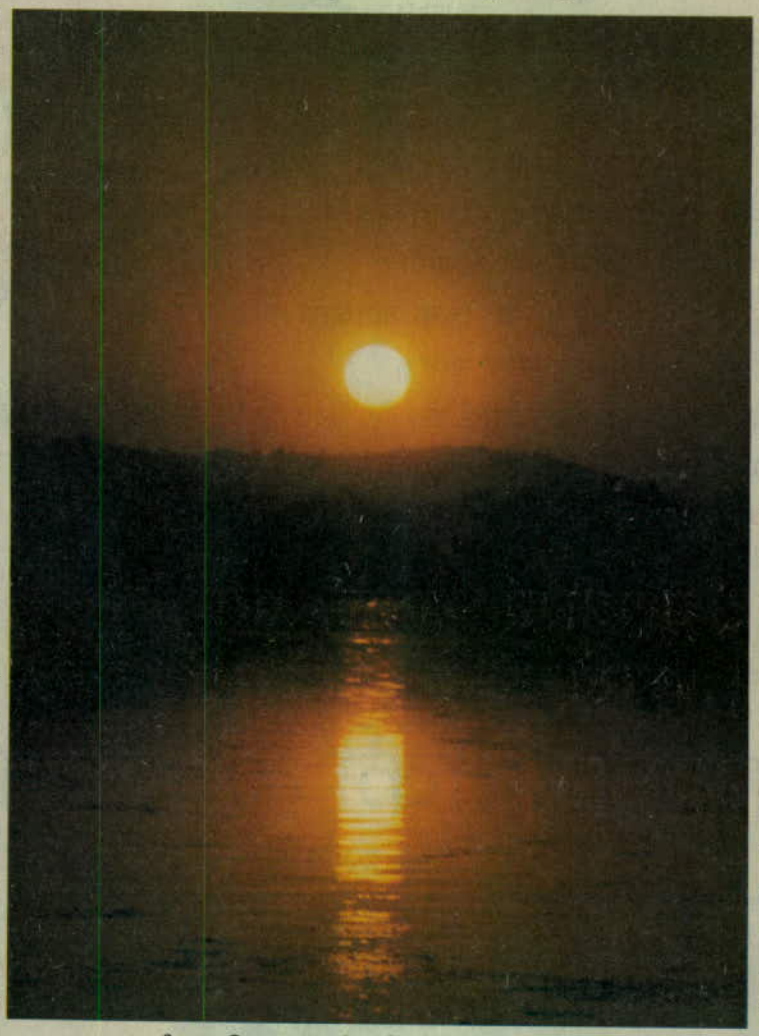

श्रीनगर स्थित डल झील में सूर्यास्त का एक दृश्य

अरिहन्त™

भारत की सबसे तेजी से बढ़ती मासिक पत्रिका

समसामयिकी महासागर

नवीनतम् घटनाओं की सम्पूर्ण मासिक पत्रिका

15/-

★ इस पत्रिका में समायी है एक महीने की वो सारी महत्त्वपूर्ण घटनाएँ जो हैं परीक्षा की दृष्टि से अति उपयोगी।

★ माह की महत्त्वपूर्ण घटनाओं की पूरी व रोचक जानकारी करेंट अफेयर्स पर आधारित 300 अति उपयोगी सवालों के साथ।

★ एक विषय विशेष की अत्यन्त सरल तरीके से बिन्दुवार व्याख्या, पाठकों के प्रोत्साहन के लिए ज्ञान प्रतियोगिता और उत्साह बढ़ाने के लिए बड़ों की बातें, आगे आने वाली परीक्षाओं की जानकारी।

★ कम मूल्य में उच्च कोटि की पाठ्य सामग्री।

बदल गईं पुरानी परिभाषाएँ, बनाए गए नए नियम
खोजे गए अनोखे तरीके, नया कलेवर, नया फ्लेवर

समसामयिकी महासागर

दरअसल ये हल्की सी नमकीन है !

अरिहन्त मीडिया प्रमोटर्स
कालिन्दी, ट्रान्सपोर्ट नगर, मेरठ-250001 (उ० प्र०)
फोन- (0121) 2401479, 2512970, 2402029

आपके निकटतम बुक स्टॉल पर उपलब्ध

YH/2/7/06

मैट प्रभाव

न्यूनतम वैकल्पिक कर क्या है?

न्यूनतम वैकल्पिक कर (मैट), वह न्यूनतम कर-राशि है जिसे लाभ कमाने वाली एक कंपनी को, जिसे कर गणना के हिसाब से चाहे कोई कर नहीं देना हो, अदा करना पड़ता है। ऐसे कई उदाहरण हैं जहां कई बड़ी भारतीय कंपनियों की आय कई राज्यों की सकल राजस्व-प्राप्तियों से भी अधिक है, लेकिन वे विभिन्न कर संबंधी छूटों का लाभ उठाकर कोई भी कर नहीं देती हैं। इस विसंगति को ध्यान में रखते हुए सरकार ने 1983 में आयकर अधिनियम, 1961 की धारा 80 वीवीए के तहत न्यूनतम वैकल्पिक कर (मैट) लागू किया।

मैट में अब तक क्या परिवर्तन किए गए हैं?

वित्त अधिनियम 2000 के जरिये आयकर अधिनियम में धारा 115 जेबी जोड़ा गया, जो 1 अप्रैल, 2001 से प्रभावी हो गया। इसमें इस आशय का प्रावधान है कि यदि किसी कंपनी द्वारा कुल आय पर देय कर उसके पिछले किसी भी वर्ष के (1 अप्रैल, 2001 या उसके बाद के वर्ष के आकलन के आधार पर) बुक-प्रॉफिट के 7.5 प्रतिशत भाग से कम हो, तो उक्त बुक-प्रॉफिट को उस कंपनी का कुल आय मान लिया जाएगा और उसे उक्त बुक-प्रॉफिट का 7.5 प्रतिशत भाग कर के रूप में अदा करना होगा। यह आयकर अधिनियम की धारा 115 जेए से सिद्धांत रूप में भिन्न है। पहले धारा 115 जेए में मैट वसूली का प्रावधान था। इस धारा के अनुसार अवसंरचना व ऊर्जा क्षेत्र के करों को छोड़कर कंपनियों द्वारा देय कर की न्यूनतम राशि की गणना बुक-प्रॉफिट के 30 प्रतिशत भाग को कर योग्य आय मानते हुए की जाती थी और उक्त आय का 7.5 प्रतिशत भाग कर के रूप में ली जाती थी। इसके अलावा, कंपनियों द्वारा मैट क्रेडिट की निकासी का एक कानूनी प्रावधान भी है। आयकर अधिनियम की धारा 115 जेएए की उपधारा (1) तथा (1ए) में इस बात का प्रावधान है कि धारा 115 जेए तथा 115 जेबी के तहत कंपनियों द्वारा चुकाए गए मैट पर क्रेडिट उपलब्ध होगा। क्रेडिट पर उपलब्ध राशि, धारा 115 जेए या 115 जेबी के तहत किसी आकलित वर्ष में चुकाए गए मैट और कुल आय पर अदा किए गए कुल कर के बीच के अंतर के बराबर होगी। धारा 115 जेएए की उपधारा (3) के अनुसार मैट पर उपलब्ध क्रेडिट को धारा 115 जेए के तहत कर चुकाने वाली कंपनियों के लिये पांचवें आकलित वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। वर्ष 2006-07 के बजट में मैट की दर को बढ़ाकर बुक-प्रॉफिट का 10 प्रतिशत कर दिया गया है। धारा 115 जेबी के तहत कर अदा करने वाली कंपनियों के लिये मैट पर उपलब्ध क्रेडिट को अब सातवें आकलित वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है।

बुक-प्रॉफिट क्या है?

बुक-प्रॉफिट से तात्पर्य उन निवल लाभों से है, जिन्हें संबद्ध पिछले वर्ष के लाभ और हानि के उन खातों में दर्शाया जाता है, जो कंपनी अधिनियम, 1956 की छठी अनुसूची के भाग-I व II के प्रावधानों के अनुरूप तैयार किए जाते हैं। लाभ और हानि के खातों में संबद्ध वर्ष में कंपनी के कार्यकलापों के परिणामों का खुलासा होना चाहिए। इसमें सभी उधारियों या प्राप्तियों व बकायों या अनावर्ती लेन-देन के रूप में खर्चे या विशिष्ट लेन-देन का भी खुलासा होना चाहिए। निवल लाभ की गणना के लिये लाभ एवं हानि खातों में कुछ खास बातों का समावेश किया जाता है। ये हैं :

- अदा किया गया या देय आयकर
- निधि में कोई लाभ या हस्तांतरण
- देय या प्रस्तावित लाभांश
- विमुक्त आय से संबंधित व्यय
- सहायक कंपनियों की हानि के प्रावधान एवं अज्ञात देनदारियों के प्रावधान

वर्ष 2006-07 के बजट में इस आशय का निर्देश है कि निवल लाभ की गणना में दीर्घकालिक पूंजीगत लाभों का भी समावेश किया जाएगा।

क्या न्यूनतम वैकल्पिक कर (मैट) का प्रावधान अन्य देशों में भी है?

भारत के अलावा बहुत थोड़े से देशों ने न्यूनतम वैकल्पिक कर आरोपित किया है। ऐसे ही देशों में एक अमरीका है। अमरीका में यह वैकल्पिक न्यूनतम कर (एएमटी) के नाम से जाना जाता है। एएमटी नियमों के तहत एक व्यक्ति को आमतौर पर प्राप्त कई कटौतियों एवं छूटों की अनुमति नहीं है। इसलिये, कर योग्य उसकी आय कहीं अधिक होती है। यद्यपि धर्मार्थ दानों तथा गिरवी से संबंधित ब्याज-दर समेत कुछ कटौतियों की अनुमति है, लेकिन गैर अदा व्यावसायिक खर्चों, कानूनी शुल्क, बच्चों से संबंधित कर, उधारी समेत कई बड़ी रियायतों को समाप्त कर दिया गया।

एएमटी के तहत कर की अधिकतम दर 28 प्रतिशत है, जो सामान्य कर पद्धति की दर 35 प्रतिशत की अपेक्षा कम है। लेकिन, इसमें कर संबंधी देनदारियां अधिक हैं क्योंकि कर-योग्य आय अपेक्षाकृत अधिक है। ❑

घाटा एवं राजकोषीय अविवेक क्या है

वर्ष 2005-06 के दौरान केंद्र सरकार 1.34 लाख करोड़ रुपये ब्याज के रूप में अदा करेगी। इतनी रकम 5 लाख रुपये की लागत वाले मध्यम दर्जे के 27,00,000 मकानों या देश के प्रत्येक जिले में 500 नये स्कूलों के निर्माण के लिये पर्याप्त है। दुर्भाग्य से इतनी विशाल राशि प्रत्येक वर्ष ब्याज की अदायगी के रूप में यों ही बेकार चली जाती है। ब्याज की अदायगी और कुछ नहीं बल्कि घाटे को पाटने के लिये सरकार द्वारा वर्षों से लिये गए कर्ज़ों के बोझ की एक झलक है। विभिन्न वित्तमंत्रियों ने राजस्व एवं खर्चों के बीच की बढ़ती खाई को पाटने की असफल कोशिश की है। वित्तमंत्री पी. चिदंबरम भी 2007-08 के बजट में घाटे को नियंत्रित करने का प्रयास करेंगे, जिसकी बानगी शीघ्र ही दिखाई देगी। यहां विभिन्न प्रकार के घाटे एवं अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव के बारे में जानकारी दी जा रही है।

घाटा से क्या तात्पर्य है?

घाटा मूलत: व्यय एवं प्राप्तियों के बीच का अंतर है। सार्वजनिक वित्त के संदर्भ में इसका अर्थ यह है कि सरकार अपनी आय से अधिक खर्च कर रही है। सरकारी खर्च एवं राजस्व को पूंजीगत एवं राजस्व में विभाजित किया जा सकता है। पूंजीगत-व्यय में सामान्यतया उन खर्चों को शामिल किया जाता है जिनसे परिसंपत्तियों का निर्माण होता है। राजस्व-व्यय मुख्य रूप से वैसे खर्च होते हैं जिनसे परिसंपत्तियों का निर्माण नहीं होता है। मसलन - कर अदायगी, वेतन, सब्सिडी आदि। उदाहरण के तौर पर, फ्लाईओवर का निर्माण पूंजीगत व्यय होगा, जबकि निर्माण कार्य की निगरानी में लगे सरकारी कर्मचारियों को दिया जाने वाला वेतन राजस्व-व्यय होगा।

इसी प्रकार, सरकार द्वारा कर के रूप में हासिल की गई प्राप्तियां, राजस्व प्राप्ति कहलाती है। बिना आवर्ती चरित्र वाली प्राप्तियां सामान्यतया पूंजीगत प्राप्तियां होती हैं। इनमें घरेलू एवं बाह्य ऋण, विनिवेश से प्राप्त आय, केंद्र सरकार द्वारा प्रदत्त ऋण की वसूली आदि शामिल है।

क्या एक विकासशील देश के लिये घाटे की वित्त व्यवस्था आवश्यक है?

राज्य अक्सर पर्याप्त मात्रा में कर-राजस्व पैदा करने में असफल हो जाते हैं ताकि राज्य, विशेषकर एक कल्याणकारी राज्य का खर्च समुचित रूप से चल सके। घाटे की वित्त व्यवस्था राज्य को उन गतिविधियों को संचालित करने की अनुमति देती है जो अन्यथा उसकी आर्थिक क्षमता से बाहर होती।

उल्लेखनीय है कि इस अवधारणा को ब्रिटिश अर्थशास्त्री जे.एम. केयन्स ने मंदी का शिकार अर्थव्यवस्था में जान फूंकने की खातिर लोकप्रिय बनाया। घाटे की वित्त व्यवस्था के पीछे मूल उद्देश्य कृत्रिम साधनों के माध्यम से आर्थिक विकास को आवश्यक प्रोत्साहन देना है। दुर्भाग्यवश, भारत में घाटे की वित्त व्यवस्था का चलन इस हद तक हो गया कि इसकी उम्मीद लार्ड केयन्स ने शायद ही कभी की होगी।

वर्ष 2004-05 के संशोधित आकलन के मुताबिक पूंजीगत व्यय जहां 1.37 लाख करोड़ रुपये (2005-06 के बजट में 1.43 लाख करोड़ रुपये) था, वहीं घाटे की वित्त व्यवस्था के ध्येय को आगे बढ़ाने की खातिर लिये गए ऋण के ब्याज की रकम 1.26 लाख करोड़ रुपये (2005-06 के बजट में 1.34 लाख करोड़ रुपये) थी। इसका अर्थ यह है कि भारत ब्याज की अदायगी में लगभग उतनी ही राशि खर्च कर रहा है जितना कि विकास पर। इससे भी यह पता चलता है कि घाटे की वित्त व्यवस्था का कितना ख़तरनाक दोहन हुआ है।

राजस्व घाटे को क्यों समाप्त करना चाहिए?

एक सरकार के लिये राजस्व का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत कर होता है। पारंपरिक रूप से इसे एक संप्रभु का वैधानिक हिस्सा माना गया है। राजस्व-व्यय एवं राजस्व-प्राप्ति के बीच का अंतर राजस्व घाटा कहलाता है। इसका मतलब यह हुआ कि सरकार अपने आवर्ती आय के माध्यम से अपना खर्च पूरा करने में असमर्थ है।

राजकोषीय दायित्व एवं बजट प्रबंधन अधिनियम, 2003 में राजस्व घाटा में क्रमिक कटौती एवं 2008-09 तक अंतिम रूप से इसकी समाप्ति का एक खाका तैयार किया गया है। इससे राजस्व में बढ़ोतरी होने के साथ-साथ सब्सिडी, वेतन एवं पेंशन से जुड़े खर्चों पर लगाम लगेगा। आखिरकार, सरकार को अपने साधनों के अनुरूप ही काम करना चाहिए।

राजकोषीय घाटे का क्या महत्व है?

सरकार का पहला काम राजस्व घाटे को पाटना है। दूसरा काम विभिन्न परियोजनाओं एवं पूंजीगत स्वरूप वाले स्कीमों में निवेश के लिये आवश्यक संसाधन जुटाना है। इनमें सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों में किया जाने वाला अंशदान, सार्वजनिक उद्यमों के लिये दिया गया ऋण तथा आधारभूत संरचना से जुड़ी परियोजनाओं में निवेश आदि शामिल हैं। इस किस्म के निवेश प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से लाभ देते हैं।

सरकार राजस्व घाटे को पाटने एवं विकास से जुड़ी परियोजनाओं व स्कीमों के वित्त-पोषण के लिये पैसा उधार लेती है। एक संप्रभु के रूप में सरकार विभिन्न स्रोतों से, जिनमें भारतीय रिज़र्व बैंक, व्यावसायिक बैंक, आम जनता, बाह्य ऋण आदि शामिल हैं, अपेक्षाकृत सस्ती दर पर उधार लेती है। प्राप्ति एवं व्यय के बीच के अंतर को पाटने के लिये लिया गया कुल उधार राजकोषीय घाटा कहलाता है। इसकी माप सकल घरेलू उत्पाद की प्रतिशतता के रूप में की जाती है क्योंकि अलग-अलग वर्षों की उधारियों की तुलना निश्चित शब्दों में करना सही नहीं हो सकता है। ❑

क्या है रेपो दर

○ एल.आर. शर्मा

जिस दर पर रिज़र्व बैंक अन्य बैंकों को नकदी उपलब्ध कराता है उसे रेपो दर कहा जाता है। बाज़ार में नकदी की कमी होने पर बैंक भारतीय रिज़र्व बैंक से उधार लेते हैं। इसके लिये बैंकों को ब्याज देना पड़ता है। इसी ब्याज दर को रेपो दर कहा जाता है। रिज़र्व बैंक यदि रेपो दर बढ़ाता है तो इसका अर्थ हुआ कि बैंकों को नकदी प्राप्त करने के लिये ज्यादा पैसे खर्च करने पड़ेंगे। यदि बैंकों को नकदी के लिये ज्यादा पैसे खर्च करने पड़ेंगे तो ज़ाहिर है बैंक भी ग्राहकों से ऋण पर अधिक ब्याज वसूलेंगे। ऐसे में ब्याज दरें बढ़ने की संभावना बनी रहेगी।

रिवर्स रेपो दर

रिज़र्व बैंक को जब यह लगे कि बाज़ार में मुद्रा की आपूर्ति बढ़ गई है तथा मुद्रास्फीति में वृद्धि होने वाली है तो वह बाज़ार से नकदी धन उठाने की कार्रवाई शुरू कर देता है। रिज़र्व बैंक, बैंकों से नकदी उधार लेता है तथा इसके लिये उन्हें ब्याज अदा करता है। यह रिवर्स रेपो दर कहलाती है।

बैंक दर

बैंकों को जिस दर पर रिज़र्व बैंक उधार देता है उसे बैंक दर कहा जाता है। यदि बाज़ार में नकदी बढ़ानी हो तो बैंक दर कम कर दी जाती है तथा यदि नकदी कम करनी होती है तो बैंक दर बढ़ा दी जाती है।

नकद रिज़र्व अनुपात (सीआरआर)

हरेक बैंक को सिक्यूरिटी के रूप में जमाओं का कुछ प्रतिशत भारतीय रिज़र्व बैंक में चालू खाते में जमा रखना होता है। इसे नकद आरक्षी अनुपात कहा जाता है। यदि नकद आरक्षी अनुपात को कम कर दिया जाए तो बैंकों के पास नकदी बढ़ जाएगी तथा इससे मुद्रास्फीति का दबाव बढ़ेगा। बाज़ार में नकदी की कमी की स्थिति में रिज़र्व बैंक नकद रिज़र्व अनुपात में कमी कर सकता है। ❑

रिज़र्व बैंक ने रेपो दर 0.25 फीसदी बढ़ाई

ब्याज दरों में स्थिरता सुनिश्चित करने की कवायद के तहत भारतीय रिज़र्व बैंक ने प्रमुख ब्याज दरों में कोई बदलाव न करते हुए, लेकिन मुद्रास्फीति पर नियंत्रण के लिये रेपो दर में 0.25 फीसदी की बढ़ोतरी कर दी है। ऋण एवं मौद्रिक नीति की मध्यावधि समीक्षा में रिज़र्व बैंक ने जीडीपी विकास दर पूर्वानुमान को साढ़े सात से बढ़ाकर आठ फीसदी कर दिया। केंद्रीय बैंक ने रुपये की पूर्ण परिवर्तनीयता की ओर कुछ कदम उठाने की भी घोषणा की है जिसमें प्रवासी नागरिक व्यक्तिगत स्तर पर साल में पचास हजार डॉलर तक की राशि रेमिट कर सकेंगे।

कुछ बैंकों ने रिज़र्व बैंक की इस पहल को संतुलित कदम बताया है। उनका कहना है कि रेपो दर को 0.25 फीसदी बढ़ाकर 7.25 फीसद करने से वाहन ऋण की ब्याज दर पर असर नहीं पड़ेगा लेकिन व्यक्तिगत एवं उपभोक्ता ऋण महंगे हो सकते हैं। वित्त वर्ष 2007 के लिये वार्षिक नीति की मध्यावधि समीक्षा में शीर्ष बैंक ने बैंक दर एवं नकद आरक्षित अनुपात सीआरआर को क्रमशः छह फीसद व पांच फीसद पर अपरिवर्तित रखा है।

रिज़र्व बैंक ने कहा है कि कृषि क्षेत्र की विकास दर तीन फीसद रहने का अनुमान है।

मुद्रास्फीति के दबाव के बावजूद शीर्ष बैंक ने मौजूदा वित्त वर्ष में मुद्रास्फीति दर 5 से 5.5 फीसद रहने का विश्वास जताया है। बैंक ने कहा है कि उसके रुख से ऐसा मौद्रिक व ब्याज दर का माहौल बनेगा जो निर्यात और अर्थव्यवस्था की निवेश मांग का समर्थन करने वाला हो। रिज़र्व बैंक ने कहा है कि ऐसा विकास की गति को बनाए रखने तथा क़ीमतों को स्थिर बनाए रखने के लिये किया गया है।

बैंकिग क्षेत्र में जोखिम प्रबंधन से जुड़े बेसल-दो नियमों के अनुपालन के लिये बैंकों को और समय देते हुए रिज़र्व बैंक ने कहा कि भारत में काम कर रहे विदेशी बैंकों और विदेशों में काम कर रहे भारतीय बैंकों को बेसल-दो नियमों का अनुपालन 31 मार्च, 2008 तक करना होगा। बाकी अन्य सभी वाणिज्यिक बैंकों को बेसल-दो नियमों का पालन 31 मार्च, 2009 तक सुनिश्चित करना होगा। शीर्ष बैंक ने कहा है कि बैंकिंग की 'तैयारी' को ध्यान में रखते हुए अन्य बैंकों को बेसल-दो नियमों के अनुपालन के लिये अधिक समय दिया गया है। इससे बैंकों को उचित प्रणाली स्थापित करने के लिये अधिक से अधिक समय मिलेगा।

रेपो दर बढ़ाने के फैसले का समर्थन करते हुए वित्तमंत्री पी. चिदंबरम ने कहा कि यह बैंकों के लिये ऋण वृद्धि दर को नरम बनाने का संकेत है। श्री चिदंबरम ने मौद्रिक नीति पर अपनी प्रतिक्रिया में संवाददाताओं से कहा, "अगर बैंक अपने संसाधनों से ज्यादा क़र्ज दें और फिर रिज़र्व बैंक के पास आएं तो उन्हें 25 आधार अंक अधिक देने के लिये तैयार रहना चाहिए।" उन्होंने कहा कि व्यस्त सत्र में बैंकों को आरबीआई के संकेत दिमाग में रखने चाहिए और कृषि क्षेत्र को प्रभावित किए बिना ऋण की वृद्धि दर को नरम बनाना चाहिए। वित्त मंत्रालय ने कहा, "रेपो दर बढ़ाने के आरबीआई के फैसले का समर्थन करता हूं क्योंकि यह प्राथमिक रूप से देश में ऋण की वृद्धि दर को नरम बनाने के उद्देश्य से किया गया है।" उन्होंने कहा कि रेपो दर में बढ़ोतरी कर इसे 7.25 फीसद कर दिया गया है। इससे बैंकों को ऋण की गुणवत्ता सुधारने में मदद मिलेगी। लेकिन साथ ही उन्होंने कहा कि ब्याज दरें स्थिर रहेंगी। ❑

दलित महिलाओं द्वारा संचालित सामुदायिक रेडियो

○ बी. बालाकृष्णन

'रेडी.... टेकिंग.... क्यू'

नियंत्रण कक्ष से एक ग्रामीण महिला निर्देश देती है और स्टूडियो में मौजूद अन्य ग्रामीण महिलाएं गाना शुरू कर देती हैं। संगीत का यह कार्यक्रम रिकार्ड करने के बाद प्रसारित कर दिया जाता है।

यह दृश्य आकाशवाणी के हैदराबाद केंद्र का नहीं बल्कि आंध्र प्रदेश के पिछड़े क्षेत्रों में शुमार मेदक जिले के झारसंथम मंडल के दूरदराज के एक गांव - मंचूर में स्थापित एक सामुदायिक रेडियो स्टेशन का है। यहां दो दलित महिलाएं - एक पस्तापुर गांव की नरसम्मा और दूसरी अलुगोलु गांव की नरसम्मा - एक सामुदायिक रेडियो स्टेशन चला रही हैं। चूंकि दोनों महिलाओं का नाम एक ही है, लिहाजा उनके गांव का नाम उनकी पहचान है। उन्होंने दसवीं कक्षा तक पढ़ाई की है और रेडियो प्रसारण की गतिविधियों से अनजान थीं लेकिन अब वे उद्घोषणा की आधुनिक तकनीकों समेत रेडियो प्रसारण की विभिन्न गतिविधियों - रिकार्डिंग, एडिटिंग, डबिंग और मिक्सिंग में सिद्धहस्त हो चुकी हैं।

यह सब संभव हुआ ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में संलग्न डेक्कन डेवलपमेंट सोसायटी नामक एक स्वयंसेवी संस्था की सहायता से। महिला सशक्तीकरण, स्वयं सहायता समूह के निर्माण एवं कृषि कार्यों में संलग्न इस संस्था ने यूनेस्को द्वारा प्रदत्त वित्तीय सहायता के जरिये इन महिलाओं को स्टूडियो के निर्माण तथा रिकार्डर, मिक्सर, एडिटिंग - सूट आदि उपकरणों की ख़रीद में मदद दी। एक एफएम ट्रांसमीटर की भी स्थापना की गई है, जिससे मंचूर के 30 किलोमीटर के दायरे में अवस्थित 100 से अधिक गांवों के लोग लाभान्वित होंगे।

यदि एक महिला रेडियो स्टेशन में मौजूद होती है तो, दूसरी अपने यूपीटीआर (अल्ट्रा पोर्टेबल टेप रिकार्डर) के साथ गांवों में जाती है और वहां उपलब्ध विशेषज्ञों के साथ साक्षात्कार एवं वार्ताएं रिकार्ड करती है। बातचीत अथवा परिचर्चा में गांव से संबंधित विविध विषयों का समावेश होता है। मसलन - महिला मुद्दे, बाल विकास, स्वास्थ्य, सामाजिक समस्याएं, कृषि, कीट प्रबंधन, जलदाय विकास, पेयजल, पोषण, बाल श्रम आदि। ये दोनों महिलाएं पिछले सात वर्षों के दौरान 500 घंटों की रिकार्डिंग कर चुकी हैं। चूंकि उनके स्टेशन को प्रसारण लाइसेंस नहीं मिला है, इसलिये वे अपने रिकार्डिंग को लेकर गांवों में जाती हैं और लाउड स्पीकर के माध्यम से उन्हें बजाती हैं। अब चूंकि भारत सरकार ने देशभर में मौजूद सभी सामुदायिक रेडियो स्टेशनों को लाइसेंस देने का निर्णय लिया है, लाइसेंस प्राप्त करने वालों में उनका रेडियो स्टेशन पहला होगा और वे अपने कार्यक्रमों का प्रसारण कर सकेंगी।

बचपन में बाल समूह के नेता के तौर पर 'जनरल' कही जाने वाली नरसम्मा बताती हैं, "आरंभ में लोग हमारे कार्यक्रमों में रुचि नहीं लेते थे। पर ज्यों ही उन्हें इसकी उपयोगिता का अहसास हुआ वे इसमें रुचि लेने लगे।"

डेक्कन डेवलपमेंट सोसायटी के उप निदेशक सुरेश कुमार कहते हैं, "हमने प्रत्येक गांव में कम-से-कम एक एफएम रिसीवर मुहैया कराया है और अब हम अपना ध्यान सभी 75 गांवों में प्रत्येक सदस्य को एक एफएम रिसीवर मुहैया कराने पर केंद्रित कर रहे हैं क्योंकि हमें अपना कार्यक्रम प्रसारित करने का लाइसेंस मिलने ही वाला है।"

सामुदायिक रेडियो का संचालन करने वाली दलित महिलाओं के बारे में जानकारी हासिल करने के लिये आप www.ddsindia.com पर लॉग ऑन कर सकते हैं। ❑

(लेखक हैदराबाद स्थित *योजना* (तेलुगू) के सहायक संपादक हैं)

दिल्ली में साइकिल रिक्शे

❍ गौतम तिवारी

आधुनिक परिवहन में साइकिल रिक्शों की एक सकारात्मक भूमिका है। लेकिन इनकी ज़रूरतों को न समझ पाने और बुनियादी सुविधाएं न होने के कारण सड़क पर इनके कारण भीड़भाड़ और असुविधा होती है। शहरों में इनके लिये सुविधाएं और पार्किंग व्यवस्था बनाना संभव है, जिससे इन वाहनों को चलाना भी सुगम हो सकता है। अगर बुनियादी सुविधाओं में साइकिल रिक्शों का ध्यान रखा जाए तो ये मेट्रो और त्वरित बस व्यवस्था के प्रयोग में बढ़ोतरी कर सकते हैं

सर्वविदित है कि दिल्ली में किसी भारतीय शहर की तुलना में सर्वाधिक मशीनचालित वाहन हैं। लेकिन रिक्शों और अन्य गैर-मशीनचालित वाहनों की संख्या में लगातार गिरावट आती रही है। ऐसा लगता है कि जनता के आय स्तर में वृद्धि और कारों और स्कूटरों की संख्या बढ़ने के बावजूद साइकिलों, साइकिल रिक्शों और ठेलों की काफी मांग है। यातायात प्रबंधन और सड़कों की विपरीत नीतियों के बावजूद गैर-मशीनचालित परिवहन साधनों की संख्या बढ़ती रही है। ये नीतियां प्रमुखत: कारों के सुगम यातायात को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं। नगर जनसंख्या के आर्थिक-सामाजिक गठन को ध्यान में रखें तो कहा जा सकता है कि इन चीजों की मांग आगे भी बनी रहेगी। वस्तुत: ऐसी नीतियां और मूल सुविधाएं विकसित करने की ज़रूरत है जिनसे साइकिल रिक्शों का चलना आसान हो सके क्योंकि इस वाहन के कारण प्रदूषण नहीं होता और यह बसों और मेट्रो परिवहन की सहायक सिद्ध हो सकती है।

साइकिल रिक्शों के पक्ष में एक अन्य तर्क है, रोज़गार सृजन। रिक्शा चलाकर गांव से शहर जाने वाली अकुशल आबादी को ईमानदारी से जीविकोपार्जन का अवसर मिल जाता है। लेकिन इनके कारण सड़क पर अव्यवस्था फैलती है। दिल्ली और अन्य शहरों में यातायात नियोजन के समक्ष इनका ध्यान नहीं रखा जाता है। अनेक अध्ययनों से उन विस्फोटक परिस्थितियों का पता चलता है जिनसे किसी रिक्शेवाले को गुज़रना पड़ता है। अधिकांशत: रिक्शा मालिक ठेकेदार होते हैं जो रिक्शा चालकों से एक निश्चित रकम की मांग करते हैं। वे टेक्नोलॉजी अथवा पर्यावरण की कोई परवाह नहीं करते। लेकिन रिक्शा चालकों के शोषण का यह मात्र एक पक्ष है। इनके प्रति अधिकारी अथवा औपचारिक यातायात नियोजन नीतियों में जो रवैया अपनाया जाता है वह और भी गंभीर चिंता का विषय है।

रिक्शे और यातायात प्रबंधन से जुड़ी भ्रांतियां

ऐसा माना जाता है कि रिक्शों के कारण सड़क पर भीड़भाड़ हो जाती है और वे नीतियों का उल्लंघन करते हैं जिसके कारण सड़क पर अव्यवस्था फैलती है। लेकिन दिल्ली और अन्य शहरों में यातायात नियोजन में रिक्शों और अन्य गैर-मशीनचालित वाहनों की पूरी तरह अनदेखी की गई है। 10.60 मीटर से 2.60 मीटर तक की चौड़ाई और 15 किमी. प्रतिघंटे से 100 किमी. प्रति घंटे की रफ्तार वाले वाहन भी सड़क पर समान जगह घेरते हैं। ऐसी ही गतिशीलता और आकार के वाहनों को चलाने के लिये उतनी ही खाली जगह चाहिए। यातायात के लिये अलग-अलग रास्ते और गति नियंत्रण की सुविधा उपलब्ध नहीं है। विधिवत प्रशिक्षित नियोजक को यह बिल्कुल अव्यवस्था जान पड़ती है। शहरों में गैर-मशीनचालित और मशीनचालित यातायात का हर समय और हर स्थान पर अलग घनत्व होता है। मौजूदा यातायात लक्षण, विभिन्न सवारियों की स्थिति, स्थान के अनुसार विवरण, ज्यामितिक परिकल्पना, भू-उपयोग लक्षण और संचालन संबंधी अन्य बातों पर ध्यान दें तो एक अनूठी स्थिति सामने आती है जिसमें सरकारी नियोजनों के मुक़ाबले आर्थिक एवं यात्रा मांगों की मज़बूरी स्पष्ट दिखती है। दो या तीन गलियों वाली सड़कों पर साइकिलें, रिक्शे और अन्य गैर-मशीनचालित वाहन आमतौर पर सबसे बाईं तरफ वाली गली का इस्तेमाल करते हैं। ऐसे में मशीनचालित वाहन इस गली का इस्तेमाल तब भी नहीं करते जब रिक्शा या साइकिल वहां बहुत कम होते हैं। रिक्शा और साइकिल वाले दाहिनी ओर की सड़क पर सिर्फ एक ही लेन होती है, वहां भी

साइकिल और रिक्शा वाले एकदम बाएं रहते हैं और मशीनचालित वाहनों को गुज़रने की जगह देते हैं।

साइकिलें और अन्य गैर-मशीनचालित वाहन सड़क के बाएं चलते हैं अत: बसें निर्धारित लेन में नहीं चल पातीं और स्टॉप पर बीच के लेन में ही खड़ी होती हैं इससे यातायात में बाधा पड़ती है और साइकिल और रिक्शे से चलना ख़तरनाक हो जाता है। मशीनचालित वाहन तब भी उस लेन में नहीं चलते जब साइकिल और रिक्शे कम चल रहे होते हैं। अगर साइकिल और रिक्शों के लिये अलग रास्ता बना दिया जाए तो मशीनचालित वाहनों को चलने के लिये ज्यादा जगह मिलेगी और यातायात सुगम होगा। ज़ाहिर है कि रिक्शों और अन्य गैर-मशीनचालित वाहनों के लिये सुविधा न होने के कारण सड़क पर भीड़भाड़ और अव्यवस्था बढ़ती है वाहनों की अधिकता के कारण नहीं।

आधुनिक परिवहन व्यवस्था में रिक्शों और गैर-मशीनचालित वाहनों की भूमिका

रिक्शे औसतन 12 किमी. प्रति घंटे की रफ्तार से चलते हैं। तीन किमी. से कम दूरी के लिये रिक्शे की यात्रा मेट्रो या बस से बेहतर पड़ती है। मेट्रो या बड़े पैमाने की शहरी परिवहन व्यवस्था के लिये ये पूरक व्यवस्था की भूमिका भी निभाते हैं। एक किलोमीटर से कम दूरी की यात्रा के लिये ये पूरक सवारी का काम करते हैं। इसके मुक़ाबले बस या तिपहिया इसलिये भी बेहतर विकल्प नहीं हैं क्योंकि वे प्रदूषण फैलाते हैं। किसी भी शहर में लगभग 50 प्रतिशत यात्राएं 5 किमी. से कम दूरी की होती हैं। इनमें दिल्ली या मुंबई भी शामिल हैं। इसके लिये रिक्शे बेहतर विकल्प साबित होते हैं।

15-20 लाख वाली आबादी के शहरों के लिये सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था सिर्फ सीमित भूमिका निभाती है। शहरों के बीच की यात्राओं में मध्यम सार्वजनिक परिवहन और मशीनचालित तिपहियों और साइकिल रिक्शों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। शहरों का आकार बढ़ जाने से साइकिलों का महत्व घट जाता है। लेकिन दिल्ली जैसे महानगरों में भी साइकिलों की संख्या बढ़ी है। अनुमान है कि यहां पर साइकिलों और साइकिल रिक्शों की संख्या क्रमश: 15 लाख और 110 से 300 लाख के बीच है। इसके अलावा साइकिल रिक्शों का इस्तेमाल फ्रिज, वाशिंग मशीन, फर्नीचर जैसे सामान पहुंचाने में भी किया जाता है। अर्द्ध-कुशल श्रमिक, बढ़ई, राजमिस्त्री, पाइप लाइन का काम करने वाले, डाकिये और कूरियर वाले भी साइकिलों का प्रयोग करते हैं। इसलिये साइकिल और रिक्शों की मांग अब भी बनी हुई है और भविष्य में भी रहेगी। इस स्थिति को नीतिपत्रों में नहीं माना जाता और गैर-मशीनचालित परिवहन साधनों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता।

दिल्ली में साइकिल रिक्शों और गैर-मशीनचालित वाहनों के लिये नीति और सुविधाएं

साइकिल रिक्शों के लिये चालू नीतियां प्रतिरोधात्मक हैं और इस मिथ्या विश्वास पर आधारित हैं कि किसी कुशल परिवहन व्यवस्था में इनका कोई स्थान नहीं है। दिल्ली में यातायात पुलिस और यातायात प्रबंधन विशेषज्ञों ने इन पर स्थान और समय संबंधी प्रतिबंध लगा रखे हैं। इनकी संख्या सीमित रखने के उद्देश्य से पंजीकरण किए जाने वाले रिक्शों की ऊपरी सीमा तय (99,000) की गई है। पंजीकरण प्रक्रिया के मालिक के पास वैध राशन कार्ड होना ज़रूरी हो गया है। रिक्शों को साल में निर्धारित दो अवधियों में ही पंजीकृत कराया जा सकता है। इन प्रतिबंधात्मक नीतियों को वर्तमान भूमंडलीकृत अर्थव्यवस्था के माहौल में देखा जाना चाहिए जहां नीति निर्धारक सरकारी नियंत्रण अधिकाधिक घटाने की बात करते हैं ताकि बाज़ार की अर्थव्यवस्था फले-फूले। क्या ये नीतियां साइकिल रिक्शों तथा अन्य गैर- मशीनचालित वाहनों पर लागू नहीं होनी चाहिए?

आधारभूत बुनियादी सुविधाएं

एक अच्छी बुनियादी व्यवस्था वह कही जाएगी जो सड़क के सभी प्रयोगकर्ताओं की ज़रूरतें पूरी करे। किसी मिश्रित यातायात व्यवस्था में पैदल, साइकिल सवारों और गैर-मशीनचालित वाहनों को प्रमुख तत्व माना जाता है। अगर मूल सुविधा इन सभी सवारियों का ध्यान नहीं रखती तो वे सभी अपनी अधिकतम क्षमता से कम पर चलेंगे। किसी लंबी अवधि की सुरक्षित सड़क यातायात व्यवस्था में मूल रूप से दो आकलन सिद्धांत होने चाहिए:

1. बड़ी सड़कें जिन पर 30 मीटर से अधिक चलने की जगह हो और उन पर साइकिलों/ गैर-मशीनचालित वाहनों के लिये अलग लेन बनी हो जिस पर मशीनचालित वाहन और खासतौर से मशीनी दुपहिये न चलें।
2. 30 मीटर से अधिक चलने की जगह वाली सड़कों पर यातायात कम करने वाले उपायों के जरिये वाहनों की औसत रफ्तार 20-30 किमी. प्रति घंटे रखी जाए।

दिल्ली के पुराने और ऐतिहासिक इलाकों (चांदनी चौक सहित) में यातायात व्यवस्था की योजना के लिये रिक्शे चल सकें। अन्य प्रमुख सड़कों पर 2.5 मीटर चौड़ी लेन बनाई जाएं जिन पर रिक्शा और साइकिलें चलें। इसके जरिये शहर के लिये तैयार की जा रही त्वरित बस यातायात व्यवस्था के लिये पूरक बुनियादी सुविधा भी बनाई जा सकेगी। दिल्ली के लिये विस्तृत अलग सर्विस लेन और फुटपाथ शामिल किए गए हैं। सर्विस लेन में साइकिल रिक्शों और अन्य गैर-मशीनचालित वाहनों की पार्किंग की सुविधा शामिल है। इनमें साइकिलों की मरम्मत, जूते की मरम्मत और अन्य दुकानदारों के लिये जगह की व्यवस्था भी होगी।

निष्कर्ष

अब जबकि प्रदूषण रहित ढंग से आना-जाना सबकी बुनियादी चिंता का विषय बन गया है, आधुनिक परिवहन में साइकिल रिक्शों की एक सकारात्मक भूमिका है। लेकिन इनकी ज़रूरतों को समझ न पाने और बुनियादी सुविधाएं न होने के कारण सड़क पर इनके कारण भीड़भाड़ और असुविधा होती हैं। शहरों में इनके लिये सुविधाएं और पार्किंग व्यवस्था बनाना संभव है, जिससे इन वाहनों को चलाना भी सुगम हो सकता है। अगर बुनियादी सुविधाओं में साइकिल रिक्शों का ध्यान रखा जाए तो ये मेट्रो और त्वरित बस व्यवस्था के प्रयोग में बढ़ोतरी कर सकते हैं। ऐसी नीतियां रिक्शों और अन्य गैर-मशीनचालित वाहनों की परिवहन व्यवस्था में भूमिका और महत्वपूर्ण बना सकती है। ❑

(लेखिका आईआईटी, दिल्ली में प्रोफेसर हैं)

बिहार के कृषि श्रमिकों की समस्याएं

○ आनंद किशोर

एक दशक से अधिक से जारी उदारीकरण के दौर में भी समाज के सभी तबकों की जीवन पद्धति में विकास की नयी अवधारणाओं को स्थापित करने के प्रयास जारी हैं। बावजूद सारे प्रयासों के खेतिहर श्रमिकों के जीवन में अपेक्षित सुधार दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं और मज़दूरों का बड़े पैमाने पर पलायन जारी है

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद समाजवादी ढांचे के समाज की स्थापना के संकल्प के साथ गठित विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण श्रमिकों, खासकर खेतिहर श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये लगातार कार्यक्रम तय किए जाते रहे हैं। इतना ही नहीं, उनकी सही हालात की जानकारी के लिये राष्ट्रीय आयोग भी गठित किए जाते रहे हैं। इधर एक दशक से अधिक से चलाए जा रहे उदारीकरण के दौर में भी समाज के सभी तबकों के जीवन पद्धति में विकास की नयी अवधारणाओं को स्थापित करने के प्रयास जारी हैं। बावजूद सारे प्रयासों के खेतिहर श्रमिकों के जीवन में अपेक्षित सुधार दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं और इन समस्याओं से त्राण की आस लगाए महानगरों तथा विकसित राज्यों की ओर मज़दूरों का बड़े पैमाने पर पलायन जारी है।

देश में कृषि श्रमिकों की स्थिति

कृषि श्रम जांच आयोग, 1960 की रपट के अनुसार कुल ग्रामीण परिवारों में कृषक श्रमिक परिवारों की संख्या 25 प्रतिशत थी और उनमें से 85 प्रतिशत स्वतंत्र मज़दूर तथा 15 प्रतिशत खास भू-स्वामियों से बंधे हुए मज़दूर थे। 1961 में कृषि श्रमिकों की संख्या 3.10 करोड़ थी जबकि 1981 की जनगणना आंकड़ों के अनुसार कुल कृषि श्रमिकों की संख्या 6.44 करोड़ थी। देश में कुल श्रमिकों की संख्या 22.46 करोड़ थी और उसमें कृषि श्रमिक कुल श्रम शक्ति का 26.3 प्रतिशत था। ग्रामीण श्रम से संबंधित राष्ट्रीय आयोग के अनुसार 70 से 80 के दशक में जनसंख्या में क्रमशः 2 प्रतिशत और 1.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई जबकि कृषि श्रमिकों की संख्या में क्रमशः 41 प्रतिशत तथा 3.0 प्रतिशत प्रतिवर्ष की वृद्धि हुई।

1991 के जनगणना के अनुसार देश में कृषि मज़दूरों की संख्या 7.46 करोड़ है जिनमें 4.62 करोड़ पुरुष तथा 2.84 करोड़ महिला कृषि मज़दूर हैं। 2001 के जनगणना आंकड़ों के अनुसार देश में कुल ग्रामीण खेतिहर मज़दूरों की संख्या 10.31 है जिनमें 5.47 करोड़ पुरुष तथा 4.84 करोड़ महिला मज़दूर हैं। इस प्रकार उत्तरोत्तर कृषि श्रमिकों की संख्या में बढ़ोतरी हो रही है। वैसे जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में कृषि-श्रमिकों की संख्या में आनुपातिक वृद्धि ज्यादा है। जनसंख्या वृद्धि के अलावा श्रमिकों की संख्या वृद्धि को बल इस बात से भी मिल रहा है कि रोज़गार सृजन की गति धीमी है और रोज़गार सृजन करने वाले कार्यक्रमों का लाभ पूरी तरह ग्रामीण श्रमिकों को नहीं मिल रहा है। इतना ही नहीं, उदारीकरण के दौर में ग्रामीण अर्थव्यवस्था उपेक्षित है। कृषि, ग्रामीण कुटीर उद्योग-धंधों की दशा दयनीय है और यही परिस्थिति ग्रामीण श्रमिकों के पलायन को भी सह दे रहा है। आयोग का भी मानना है कि कृषि के आधुनिकीकरण के तहत यांत्रिक प्रयोग, परंपरागत कुटीर उद्योग की समाप्ति, मुद्रास्फीति, छोटे किसानों के सीमांत किसान बनते जाने इत्यादि कारणों के परिणामस्वरूप कृषि श्रमिकों की संख्या में इज़ाफा होता जा रहा है। आयोग ने सीमांत कृषकों के कृषि श्रमिकों में शामिल होने तथा जनसंख्या वृद्धि को भी

ग्रामीण खेतिहर श्रमिकों की संख्या में वृद्धि का कारण माना है।

बिहार में खेतिहर श्रमिकों की स्थिति

भारत के तीसरे सर्वाधिक आबादी वाले प्रांत बिहार के ग्रामीण श्रमिकों की स्थिति देश में सर्वाधिक दयनीय है। रोजी-रोज़गार, शिक्षा-स्वास्थ्य, कुपोषण, आवास सहित सभी क्षेत्रों में बिहारी मज़दूरों की स्थिति अत्यंत दयनीय है और यही कारण है कि बिहार से सर्वाधिक मज़दूरों का पलायन होता है। मज़दूरों की माली हालत सुधारने के आश्वासनों तथा रोज़गार कार्यक्रमों के सरकारी प्रयास के बाद भी तस्वीर काफी चिंताजनक है। बिहारी श्रमिकों की बदतर दशा संसद और विधान सभा ही नहीं, मीडिया के लिये भी चर्चा का विषय बना रहता है। मज़दूरों के रोज़गार के लिये भटकने, शोषण, उपेक्षा तथा दुत्कार, अज्ञानतावश रेलवे की छत पर यात्रा करते वक्त करंट लगने से मरने, कमाई कर लौटते वक्त लूटे जाने, पीटे जाने तथा प्रताड़ित होने जैसी अधिकांश ख़बरें बिहारी श्रमिकों की ही होती हैं।

1991 के जनगणना आंकड़ों के अनुसार बिहार में 95 लाख कृषि मज़दूर थे जिनमें 74 लाख पुरुष तथा 25.6 लाख महिला कृषि श्रमिक थीं। मज़दूरों के लिये रोजी-रोज़गार के ठोस अवसर नहीं होने के कारण इन मज़दूरों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है। बिहार के ग्रामीण क्षेत्रों का हाल यह है कि महिलाएं तथा बूढ़ों को छोड़कर अब अपने साथ बच्चों को भी पलायन के लिये मज़बूर करते हैं और जिन बच्चों को विद्यालयों में होना चाहिए वे जानलेवा श्रम करने को विवश होते हैं। अन्य महिलाओं की बात तो और है लेकिन जिन महिलाओं को आराम करना चाहिए वे गर्भवती महिलाएं भी परिवार के पुरुष सदस्यों की अनुपस्थिति में भारी कार्य कर बच्चों का पेट पालती हैं।

रोज़गार की संभावनाएं

बिहार में पर्याप्त एवं उन्नत किस्म की कृषि भूमि है। यहां पंजाब तथा हरियाणा जैसे उन्नत प्रांतों से अधिक उपजाऊ भूमि है। अंग्रेज जॉन इंटर तथा संसदीय समिति ने भी यहां की मिट्टी को सर्वाधिक उपजाऊ बतलाया है। बिहार में पर्याप्त जलस्रोत भी हैं। गंगा, कोसी, घाघरा, बागमती, बूढ़ी गंडक, कमला सहित अनेक नदियां हिमालय से निकलकर यहां की भूमि को सिंचित करती हैं। उनमें सालभर जल का प्रवाह होता है। उत्तर बिहार में ज़मीन के नीचे का जलस्तर भी काफी ऊपर है जिससे कम लगात में पर्याप्त सिंचाई उपलब्ध हो सकता है। इन सभी स्रोतों के बावजूद इस क्षेत्र का मात्र 28 प्रतिशत खेत सिंचित है। जबकि अपर्याप्त जलस्रोत होने के बावजूद हरियाणा तथा पंजाब का संपूर्ण कृषि क्षेत्र सिंचित है। इतना ही नहीं देश का सर्वाधिक बाढ़ प्रभावित क्षेत्र बिहार है। इसका 64.61 लाख हेक्टेयर क्षेत्र, यानी देश के कुल बाढ़ प्रभावित क्षेत्र का 16 प्रतिशत बिहार में है। इसमें भी अकेले उत्तर बिहार के कुल 58.51 लाख हेक्टेयर कृषि भूमि में से 44.47 लाख हेक्टेयर बाढ़ प्रभावित क्षेत्र है, यानी उत्तर बिहार का 76 प्रतिशत भाग बाढ़ प्रभावित है। यहां उन्नत खाद-बीज समय से उपलब्ध नहीं होता। खाद-बीज का बनावटी अभाव पैदा कर किसानों से नाजायज़ पैसे वसूले जाते हैं। संपूर्ण राज्य में घोर विद्युत संकट व्याप्त रहने से सिंचाई बाधित रहता है। राज्य में बैंकों का विस्तार अवश्य हुआ है, परंतु इसका लाभ अधिकांश व्यवसायी वर्ग तथा कुछ संपन्न किसानों को ही मिल पाता है। छोटे तथा सीमांत कृषकों के एक छोटे हिस्से को ही यह लाभ मिलता है। इस प्रकार छोटे तथा सीमांत कृषक परिस्थिति की मार से परेशान होकर खेतिहर श्रमिक बनते जा रहे हैं। राज्य के संपूर्ण कृषि क्षेत्र को सिंचाई, बिजली, आधुनिक कृषि यंत्र तथा बाज़ार उपलब्ध नहीं कराया जा सका है। दुर्भाग्य है कि मिट्टी की जांच तक की व्यवस्था जिला मुख्यालय तक में भी नहीं है। बीज प्रोसेसिंग तथा कृषि विज्ञान केंद्र भी चालू नहीं किया जा रहा है। परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र में रोजी-रोज़गार के अभाव और समुचित मज़दूरी नहीं मिलने के कारण मज़दूरों का पलायन हो रहा है। छोटे कृषक भी मज़दूरों की संख्या में इज़ाफा कर रहे हैं। ग्रामीण श्रम पर राष्ट्रीय आयोग की भी टिप्पणी है कि कृषि में नयी टेक्नोलॉजी बाज़ार प्रेरित और पूंजी प्रधान होने के कारण मुख्यत: बड़े किसानों के पक्ष में है, छोटे किसानों के पास न तो आवश्यक संसाधन हैं और न ही वे आवश्यक जानकारी और जोखिम सहन करने की शक्ति रखते हैं। इस प्रकार नयी तकनीक अपनाने में वे पिछड़ गए हैं अत: छोटे किसान बड़े किसानों की तुलना में अलाभकर स्थिति में हैं और कई बार आर्थिक दवाबों से बाध्य होकर वे कृषि श्रमिकों की बढ़ती हुई फौज में शामिल हो जाते हैं।

परंपरागत कुटीर उद्योग पूंजी संकट, सरकारी असहयोग, प्रशिक्षण, बाज़ार के संकट तथा वैश्वीकरण की मार से समाप्त हो रहे हैं। खेती से इतर समय में परंपरागत कुटीर उद्योग बड़े सहायक होते थे। बढ़ईगिरी, लोहारगिरी, कुंभकारी, रस्सी, डलिया, टोकरी बुनना, गुड़ बनाना, कशीदाकारी, रंगरेज़ी, चटाई, पत्ता बनाना, मूर्तिकारी इत्यादि कार्यों में रोज़गार तथा नकदी आय की काफी गुंजाइश रहती थी। इन उद्योगों के विकास के लिये 1975 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना की गई लेकिन इसका कार्यव्यवहार भी अब शहरों में सिमटता जा रहा है। अब उन्हें प्रायोजक बैंकों में मिला देने की योजना है। कोऑपरेटिव बैंक की स्थिति दयनीय बनने से भी ग्रामीण श्रमिक प्रभावित हो रहे हैं। संरक्षण तथा सुविधा के अभाव में ये सभी कुटीर उद्योग लुप्त होते जा रहे हैं और बेरोज़गारों की फ़ौज बढ़ती जा रही है। अशिक्षा भी इन मज़दूरों की बदहाली में काफी सहायक बनती है। गांवों में खासकर पिछड़े, अनुसूचित जाति-जनजाति में साक्षरता का प्रतिशत 19.49 है। महिला साक्षरता का प्रतिशत तो नगण्य है। अज्ञानता के कारण भी दलित तथा पिछड़े वर्ग के ग्रामीण मज़दूर अपना हक़ पाने में विफल होते हैं।

सरकारी कार्यक्रमों की स्थिति

रोजी-रोज़गार प्रदान करने हेतु जवाहर ग्राम समृद्धि योजना, स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना, सुनिश्चित रोज़गार योजना, सघन रोज़गार योजना अनुसूचित जाति/जनजाति वित्त निगम इत्यादि कई महत्वाकांक्षी कार्यक्रम प्रारंभ कर इन कार्यक्रमों पर काफी राशि आवंटित

की जाती रही है। परंतु कुछ अपवादों को छोड़कर इन योजनाओं की राशि रोज़गार के अवसर प्रदान करने की बजाय जनप्रतिनिधियों, अधिकारियों, ठेकेदारों तथा छुटभैये नेताओं का ग्रास बन जाती हैं। अन्य योजनाओं में बैंकों के अधिकारियों तथा दलालों के कारण योजना अपने उद्देश्यों से भटकती दिखती है।

खेतिहर मज़दूरों की मौजूदा परिस्थितियों के लिये मज़दूरी का कम मिलना भी महत्वपूर्ण कारण है। मज़दूरों को तय न्यूनतम मज़दूरी भी संपूर्ण बिहार में समान स्तर पर नहीं मिल पाता है तथा कहीं-कहीं आज भी परंपरागत मज़दूरी पर कार्य करना मज़दूरों की विवशता है। बिहार के बड़े हिस्से में खेती की दयनीय स्थिति के कारण किसानों की बदहाली भी उन्हें न्यूनतम मज़दूरी प्रदान करने की शक्ति नहीं देती है, न ही इस दिशा में सरकारी स्तर पर कोई समन्वित प्रयास ही किया जाता है। स्वाभाविक है कि कृषि श्रमिकों की दशा में अपेक्षित सुधार नहीं होने की स्थिति में कृषि मज़दूरों की बेरोज़गारी तथा पलायन दोनों में इज़ाफा होगा।

सुधार के उपाय

ग्रामीण श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये राज्य सरकार द्वारा आधुनिक कृषि तकनीक का लाभ छोटे तथा सीमांत किसानों तक पहुंचाना आवश्यक है। बाढ़ नियंत्रण के साथ उपलब्ध जलस्रोत के उपयोग तथा सिंचाई सुविधाओं के विस्तार के साथ शत-प्रतिशत खेती को सिंचाई सुविधा उपलब्ध करा उन्नत खाद-बीज, कृषि संयंत्र प्रत्येक किसानों के दरवाज़े पर उपलब्ध कराने की व्यवस्था को मज़बूत करना होगा। कृषि साख प्रदान करने वाले सभी बैंकिंग संस्थानों को छोटे तथा सीमांत किसानों से जोड़ने की सरकारी नीति पर अमल की दिशा में सरकार को विशेष ध्यान देना होगा। किसान क्रेडिट कार्ड योजना एक अच्छा प्रयास है परंतु बिहार में इस दिशा में बैंकों का रवैया काफी नकारात्मक है। सहकारिता बैंक के माध्यम से किसान क्रेडिट कार्ड के मापदंड के नीचे के किसानों को प्राथमिक कृषि साख सहयोग समिति के माध्यम से मिलने वाले छोटे ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया बंद होने से उन खेतिहर मज़दूरों के लिये जो भूमिहीन हैं या बहुत कम ज़मीन रखते हैं, ऋण प्राप्त करना बहुत मुश्किल हो गया है। इस प्रक्रिया से खेतिहर श्रमिक भी प्रभावित हो रहे हैं। बैंक ऋण की उपलब्धता से कृषि को बढ़ावा मिलेगा, रोज़गार में वृद्धि होगी और किसानों के मज़दूरी भुगतान की ताक़त बढ़ेगी। ग्रामीण कुटीर उद्योगों को जीवंत बनाने हेतु जवाहर ग्राम समृद्धि तथा स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोज़गार योजना के मार्फ़त ऋण मुहैया कराकर रोज़गार के अवसर बढ़ाए जा सकते हैं। कछुआ गति से लागू किए जा रहे भूमि सुधार कार्यक्रम को सख्ती से लागू कर (आवश्यकतानुसार पुराने कानूनों में सुधार कर) अतिरिक्त भूमि भूमिहीन खेतिहर मज़दूरों को आवंटित कर रोज़गार के अवसर में वृद्धि की जा सकती है।

सरकार द्वारा ग्रामीण खेतिहर श्रमिकों को रोज़गार प्रदान करने तथा उनके उन्नयन हेतु चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों के अनुपालन पर कड़ी नज़र रखी जाए तथा विभिन्न कार्यक्रमों के लिये पंचायत, प्रखंड तथा जिला स्तर पर विभिन्न कोटि के मज़दूरों के प्रतिनिधियों के साथ एक निगरानी समिति गठित की जाए। प्रशासनिक अधिकारियों को कड़े आदेश दिए जाएं कि वे अपने दायित्वों के प्रति सावधान रहें। गांवों में जाकर भूखमरी, रोज़गार के अभाव तथा पलायन पर नज़र रखें, उन्हें योजना के उद्देश्य बतावें; रोज़गार के अवसर प्रदान करें, इन प्रक्रियाओं से जहां उत्पादन में वृद्धि होगी वहीं रोज़गार वृद्धि के साथ पलायन रुकेगा।

राष्ट्रीय आयोग के सुझाव

ग्रामीण श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने कृषि श्रमिकों की दशा सुधारने के लिये अनेक सुझाव दिए हैं। आयोग ने सिंचाई, जल निकासी, बाढ़ नियंत्रण, ग्रामीण विद्युत आपूर्ति, सुखाड़ से कृषि को मुक्ति आवश्यक बताया है। इतना ही नहीं रोज़गारजनन कार्यक्रम चलाने की भी ज़रूरत बताई है। आज भी बाढ़ तथा सुखाड़ से पीड़ित बिहार में काम के लिये अनाज योजना सभी जिलों में लागू नहीं होने से बेरोज़गार श्रमिकों का पलायन तेज़ी से हो रहा है। आयोग ने कृषि श्रमिकों को वास की भूमि उपलब्ध कराने को भी आवश्यक बताया है।

रोज़गार की सुरक्षा, काम के घंटे, न्यूनतम मज़दूरी का भुगतान और विवादों के निष्पादन के लिये मशीनरी की व्यवस्था तथा केंद्र एवं राज्य स्तर पर ग्रामीण श्रमिकों के लिये पृथक विभाग की स्थापना की जाए तथा उसमें स्थानीय स्तर के भी अधिकारी की नियुक्ति की जाए। कृषि श्रमिकों के लिये मज़दूर संघों की स्थापना का प्रावधान किया जाए। कृषि श्रम कल्याण कोष की स्थापना की भी सिफ़ारिश की गई है। प्रसूति अवकाश, वृद्धावस्था पेंशन, मृत्यु एवं चोट पर क्षतिपूर्ति की व्यवस्था का भी जिक्र है तथा कल्याण कोष के लिये राज्य तथा केंद्र से आधी-आधी राशि ली जाए। आयोग की सिफ़ारिशों को श्रम मंत्रियों के 42वें सम्मेलन में राज्य के श्रम मंत्रियों को भी वितरित कर उनकी राय मांगी गई थी।

निष्कर्ष

इस प्रकार आयोग द्वारा कृषि श्रमिकों के हित में महत्वाकांक्षी सुझाव दिए गए हैं। इस दिशा में कारगर कार्रवाई से श्रमिकों की दशा सुधारने, पलायन रोकने के लिये, श्रमिकों को कृषि तथा राज्य के विकास से सीधा जोड़ा जा सकेगा। छोटे तथा सीमांत कृषकों को उन्नत कृषि का लाभ मिलने से कृषि श्रमिकों को रोज़गार मिलेगा तथा बेरोज़गारी घटेगी तथा तय न्यूनतम मज़दूरी के भुगतान की कठिनाई दूर होगी।

आयोग तथा अन्य सुझावों के तहत गत वर्षों में किए गए सरकारी प्रयासों की भी समीक्षा आवश्यक है जिससे सरकारी कार्यक्रमों को लागू करने में बरती गई उदासीनता का भी पता चल सकेगा। राज्य तथा समाज के विकास की बुनियाद, ग्रामीण खेतिहर श्रमिकों की दशा सुधारने तथा मज़दूरों को राजनीतिक इस्तेमाल से बचाने के लिये भी आबादी के इस बड़े तबके को उत्पादन तथा विकास से सीधा जोड़ना आवश्यक है।❑

(लेखक एसएलके कॉलेज, सीतामढ़ी में अर्थशास्त्र विभाग के विभागाध्यक्ष हैं)

1,58,310 करोड़ रुपये की ग्रामीण प्रगति योजना

ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचा के अभाव के अपनी तरह के पहले आकलन में राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक शोध परिषद (एनसीएईआर) ने दूरसंचार, ऊर्जा, सड़क तथा यातायात, जल और सफाई में 1,58,310 करोड़ रुपये के निवेश का अनुमान लगाया है।

ग्रामीण भारत में बुनियादी ढांचे का बेहद अभाव है- इस तथ्य को इंगित करते हुए जारी भारतीय ग्रामीण ढांचागत रिपोर्ट ने नयी वित्तीय साधनों के अतिरिक्त इन सेवाओं के विकेंद्रीकरण और स्थानीयकरण हेतु मज़बूत आधार तैयार किया है। रिपोर्ट में कहा गया है कि वर्तमान में सकल घरेलू उत्पाद के 4.6 प्रतिशत से 11वीं योजना के सघउ (जीडीपी) के 7-8 प्रतिशत तक, ढांचा हेतु बढ़ाया गया आवंटन भी अंतर को पाटने के लिये पर्याप्त नहीं हो सकता है।

"बुनियादी ढांचा निर्माण के लिये अपेक्षित पूंजी कुल व्यय का एक छोटा अंश है, जिसका राज्यों द्वारा वहन किया जाना आवश्यक होगा (संचालन तथा रखरखाव हेतु)। पूंजी लागत में केंद्रीय कोष शामिल नहीं है, जिसकी प्रशासनिक व्ययों तथा आर्थिक सहायताओं पर खर्च किए जाने की ज़रूरत होगी"- ऐसा रिपोर्ट में कहा गया है।

रिपोर्ट में वर्णित है कि 78 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों में शौचालय नहीं है, जबकि 5 प्रतिशत के लिये एक किमी के दायरे में पीने के पानी का स्रोत नहीं है।

बिजली के विस्तार के दावों के बावजूद केवल 52 प्रतिशत ग्रामीण घरों में ही बिजली के कनेक्शन हैं और जहां कनेक्शन हैं भी उन्हें भी प्रतिदिन 13-17 घंटे बिना बिजली के रहना पड़ता है। यह भी कहा गया है कि 44 प्रतिशत परिवारों के लिये समतल सड़क नहीं है। 92 प्रतिशत परिवारों के लिये सीधी एक्सचेंज लाइन नहीं होने से दूरसंचार में हुई प्रगति भी केवल गांवों को छूकर निकल गई प्रतीत होती है।

नयी प्रौद्योगिकियों को प्रोन्नत करना, स्थानीय पहल का विकास तथा मांग पैदा करना अंतर को पाटने का नुस्खा है। उदाहरणस्वरूप दूरसंचार के मामले में यह सुझाया गया है कि लैंडलाइनों के बदले वायरलेस और सेलुलर फोन ज्यादा लागत-प्रभावी हैं और लघु वित्तीय सहायता ग्रामीणों को इन यंत्रों को खरीदने या किराये पर लेने में मदद कर सकती है।

प्रधानमंत्री द्वारा वर्णित पांच चुनौतियां

- ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवित करना
- जन सेवाओं में सुधार
- बेहतर शहरी प्रबंध
- भूमंडलीय एकीकरण हेतु वित्तीय पद्धति
- बुनियादी ढांचे में निजी निवेश

गांवों का विकास करना: एनसीएईआर के ग्रामीण बुनियादी ढांचा रिपोर्ट ने गांवों के विकास के लिये 1,58,313 करोड़ रुपये के व्यय का अनुमान लगाया है। विभिन्न क्षेत्रों हेतु आकलित आवश्यकताएं निम्नलिखित हैं :

- संपर्क के विकास के लिये 92,690 करोड़ रुपये।
- ऊर्जा आपूर्ति हेतु 55,243 करोड़ रुपये।
- सड़कों और परिवहन के लिये 5,892 करोड़ रुपये।
- जल एवं सफाई के लिये 4,488 करोड़ रुपये (2002-03 के मूल्य पर)

(स्रोत : एनसीएईआर का इंडिया रूरल इंफ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट)

इसी तरह इसने डिस्कॉम प्रणाली की मदद हेतु विकेंद्रीकरण का सुझाव दिया है। इस तरह प्रशासनिक लागत कम होगी। इसके अलावा, उत्पादकों, संचरण कंपनियों तथा वितरकों के बीच राजस्व के बंटवारे का भी सुझाव दिया गया है ताकि कोई वितरक किसी ऊर्जा उत्पादक का बंधक नहीं रह पाए।

सड़कों के लिये रिपोर्ट में ग्रामीण स्तरीय समितियों की स्थापना का सुझाव दिया गया है, जो सदस्यों से प्राप्त सहयोग तथा सरकार से प्राप्त आर्थिक सहायता से सड़कें बना सकें और उचित रखरखाव सुनिश्चित करने के लिये उपयोग करने वालों से प्रभार वसूल सकें। सरकारी आर्थिक मदद प्राप्त होने वाली वित्तीय लाभ पर आधारित होने चाहिए और अधिक लाभ देने वाली परियोजनाओं को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। रिपोर्ट में सुझाव दिया गया है कि लघु ऋण वाहनों की मांग अनौपचारिक संचालकों को बढ़ा सकता है; वर्तमान नियमों के अंतर्गत सेवाएं प्रदान करना वैधानिक नहीं हो सकता है, परंतु बेहतर आवागमन हेतु इन्हें जोड़ा जा सकता है।

पानी पर उपभोक्ता प्रभार लगाए जाने का भी सुझाव है जिसे कभी भी राजनैतिक वर्गों का समर्थन नहीं मिला; इसका मकसद पानी की बरबादी कम करना और अपर्याप्त सरकारी सहायता के मद्देनज़र अन्य संसाधनों का विकास करना है। जिन्हें यह प्रभार बोझ लगता हो उनके लिये सहायता के रूप में लघु-ऋण का सुझाव है। औपचारिक जल बाज़ारों में स्थानीय प्रदाताओं को प्रवेश और मूल्य संबंधी कठिनाइयों से उलझना पड़ता है, यद्यपि बहुत से लोग अनौपचारिक रूप से इसका संचालन कर रहे हैं। पंजीकरण की मदद से इनके संचालन को वैध करने में मदद मिलेगी। ❑

रिपोर्ट में उल्लेख है कि 78 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों में शौचालय नहीं है, जबकि 5 प्रतिशत परिवारों के लिये एक किलोमीटर के दायरे में पीने के पानी का स्रोत नहीं है

स्थानीय विकास में सरकारी एवं गैरसरकारी संस्थाओं का सहयोग

○ प्रदीप कुमार

स्थानीय विकास के दो मूलभूत कारक हैं, पहला स्थानीय संसाधनों का प्रबंधन जो पर्याप्त फल के उद्देश्य से किया गया हो, दूसरा नागरिक सहभागिता। जहां तक नागरिक सहभागिता की बात है; उसके बिना सामाजिक विकास की कल्पना भी नहीं की जा सकती खासकर संसाधनों से समुचित प्रबंधन एवं स्थानीय विकास के आधारभूत स्तंभ के रूप में। इसे नीति-निर्माताओं ने भी स्वीकार किया है। इन दोनों आधारभूत मुद्दों का सरकारी संस्थानों में अभाव देखा गया है। स्थानीय स्तर पर पंचायतीराज व्यवस्था सरकारी संस्थाओं की निम्नतम कड़ी है जो स्वशासन एवं विकास संबंधी कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करता है। परंतु शायद ही कभी इस व्यवस्था के अंतर्गत संसाधनों के समुचित प्रबंधन एवं नागरिक सहभागिता के उद्देश्य में सफल रही। हालांकि पंचायतीराज संस्थाओं का व्यापक तंत्र लगभग समान स्वरूप में पूरे देश में फैला है। इसे राजनीति से दूर रखने का प्रयास भी रहा है।

इसके विपरीत गैरसरकारी संस्थान उपर्युक्त दोनों विशेषताओं के साथ स्थानीय विकास की दिशा में क्रांतिकारी कदम माने गए हैं। गैरसरकारी संस्थाओं की संरचना एवं कार्य पंचायतीराज की तुलना में काफी भिन्न व असमान है। कहीं इन संस्थाओं का घनत्व काफी अधिक है व कहीं बिल्कुल अनुपस्थित जो संरचनात्मक विषमता का बोध कराता है। इसके बावजूद स्वैच्छिक संगठन, नवाचारों एवं सामाजिक सहभागिता के द्वारा कई स्थानीय समस्याओं को सुलझाने में सफल रहे हैं। वर्तमान समय में, स्थानीय विकास की ये दोनों महत्वपूर्ण संस्थाएं (सरकारी एवं गैरसरकारी) एक-दूसरे के दोषों को दूर कर व अनुभवों का आदान-प्रदान कर नये भारत का सपना साकार कर सकती हैं।

पिछले दो दशकों से अंतरराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर गैरसरकारी संस्थाओं का व्यापक विस्तार देखा जा सकता है। एक अनुमान के तहत यह माना जा रहा है कि लगभग बारह लाख गैरसरकारी संस्थाएं भारत में विद्यमान हैं (पीआरआईए, 2002)। भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अनुसार, 1985 के बाद लगभग तीन गुने से भी अधिक नये गैरसरकारी संस्थानों को फॉरेन कॉन्ट्रीव्यूसन रेगुलेटरी एक्ट के अंतर्गत पंजीकृत किए गए हैं। 1985-86 में एफसीआरए खाते सिर्फ 7,000 गैरसरकारी संस्थानों को उपलब्ध है, जो 2001 में बढ़कर 22,9240 हो गए हैं। राजधानी दिल्ली में सोसाइटी एक्ट, 1860 के अंतर्गत पंजीकृत संस्थाओं की संख्या लगभग 84,000 बताई जाती है। यद्यपि गैरसरकारी संस्थान, सोसाइटी (1860) के अलावा अधिनियमों के अंतर्गत पंजीकृत की जा सकती हैं, जैसे- भारतीय ट्रस्ट अधिनियम (1882), भारतीय कंपनी अधिनियम (1956), अनुसूची संख्या 25, सहकारी समिति एवं ऋण अधिनियम (1904)। इन अधिनियमों के बावजूद काफी अधिक संख्या में गैरसरकारी संगठन या समूह अपंजीकृत स्थानीय विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही हैं। एक नये अध्ययन के अनुसार, भारत में लगभग आधे से अधिक कार्यरत गैरलाभकारी व गैरसरकारी संस्थाएं कहीं भी पंजीकृत नहीं है, (पीआरआईए, 2002) अध्ययन यह भी दर्शाता है। अधिकांश पंजीकृत गैरसरकारी संस्थान/सोसाइटी रजिस्ट्रेशन एक्ट (1860) के अंतर्गत पंजीकृत हैं व ग्रामीण क्षेत्र में कार्यरत हैं। उपर्युक्त उल्लिखित आंकड़ों के आधार पर निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि भारत के गैरसरकारी संगठनों का सही आकलन एवं स्वरूपों की जानकारी उपलब्ध नहीं है क्योंकि वास्तविक संख्या उनसे काफी अधिक है।

स्वयंसेवी संगठनों के संरचनात्मक स्वरूपों में काफी भिन्नताएं हैं। ये कई नामों से जाने जाते हैं जैसे- गैरसरकारी संस्था, गैरलाभकारी संस्था, सभ्य सामाजिक संस्था आदि। विभिन्न स्वरूप स्पष्ट रूप से ये परिभाषित नहीं करते कि 'स्वयंसेवी संस्था' या 'संगठन' क्या हैं बल्कि ये बतलाते हैं कि क्या नहीं है। अत: यह कहा जा सकता है कि स्वयंसेवी संगठनों का उदय सरकारी एवं आर्थिक लाभकारी संस्थाओं के विरोध में स्वैच्छिक सामाजिक समूह है जिसे लोकतांत्रिक प्रक्रिया की 'तीसरी महत्वपूर्ण संस्था' कहा जाता है। सरकारी एवं आर्थिक संस्था की तुलना में इस तीसरे क्षेत्र की जानकारी सबसे कम व सतही है।

पिछले दो दशकों में समाज की ये महत्वपूर्ण संस्थाएं तीव्र गति से विकसित हुई हैं जो कई सवालों को जन्म देती है, मसलन अचानक संस्थाओं की संख्या बढ़ने के कारण सामाजिक परिवर्तन में इसकी भूमिका एवं इसके अलावा यह समझना भी अति आवश्यक है कि इनके संबंध राज्य एवं आर्थिक संस्थानों से किस प्रकार के हैं। उपयुक्त सवालों का जवाब अध्ययन के अभाव में परस्पर विरोधी व अस्पष्ट है। एक प्रचलित धारणा के अनुसार राज्य एवं आर्थिक संस्थानों की विफलता व विलगता के कारण 'तीसरे क्षेत्र' को बढ़ावा

मिला है जो उन रिक्त स्थानों की पूर्ति करता है। नीरा चंदोक इस मत को मानते हुए कहती हैं कि नागरिकों का राज्य से उठता विश्वास ही 'सभ्य सामाजिक संस्था' की ओर सभ्य लोगों का ध्यान केंद्रित कर रहा है। इसके विपरीत प्रकाश करात का मानना है कि विलगाव से ज्यादा महत्वपूर्ण कारण भूमंडलीकरण एवं विदेशी आर्थिक सहायता है, जो स्वैच्छिक संस्थाओं को दी जा रही है, जो बढ़ती हुई गैरसरकारी संस्थाओं का महत्वपूर्ण कारक है। इन संस्थाओं की वृद्धि के अन्य कारण भी बताए जाते हैं जैसे- सरकार की सकारात्मक नीति, खासकर सातवीं पंचवर्षीय योजना से विदेशी मुद्रा का प्रत्यक्ष रूप से संस्थाओं को मिलना, शिक्षित बेरोज़गारी आदि।

खासकर विकासशील देशों में, राज्य एवं स्वैच्छिक संस्था आपस में कई रूपों में संबंधित हैं। राज्य की प्रकृति, सरकार एवं राजनीतिक पार्टी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से गैरसरकारी संस्थाओं की उत्पत्ति एवं उसकी दिशा को काफी प्रभावित करती है। इस संदर्भ में राज्य की भूमिका को मुख्यत: चार प्रकार से देखा गया है- नियंत्रक के रूप में, विकास में सहयोगी, संसाधन उपलब्ध कराना एवं शक्ति संतुलन के उद्देश्य से। वर्तमान समय में ये चारों भूमिकाएं राज्य एवं स्वैच्छिक संस्थाओं के बीच मिश्रित संबंधों की ओर इंगित करती है। संस्थाओं की भूमिका भी स्वैच्छिक संस्थाओं की उत्पत्ति एवं विकास में महत्वपूर्ण है। ये न केवल संसाधन उपलब्ध कराते हैं अपितु कई ऐसे संगठन उनके द्वारा स्थापित किए गए हैं जो सामाजिक कल्याण के क्षेत्र में विख्यात हैं जैसे- फोर्ड फाउंडेशन (फोर्ड कंपनी), मेलिंडा फाउंडसेन (माइक्रोसॉफ्ट कंपनी), आबजस्बिर रिसर्च फाउंडेसन (रिलायंस कंपनी) इत्यादि। हालांकि आर्थिक संस्थाओं की भूमिका काफी अंश में अप्रत्यक्ष रूप से राज्य द्वारा निर्देशित और निर्धारित होती है। एफसीआरए 1976 ऐसा ही एक अधिनियम है जो स्वैच्छिक संस्थाओं को विदेशी मुद्रा की प्राप्ति का आकलन करता है।

स्वैच्छिक संगठनों का उपर्युक्त परिचय एवं राज्य सरकार, गैरसरकारी, गैरआर्थिक संस्थाओं से इसके परस्पर संबंध के बाद हमारा उद्देश्य प्रस्तुत आलेख में, सरकारी व गैरसरकारी संस्थाओं की सहभागिता पर केंद्रित है। सरकार एवं इसकी उत्तरदायी संस्थाएं स्थानीय शासन व विकास में काफी अंशों में स्थानीय स्वैच्छिक संगठनों पर निर्भर हैं। यह निर्भरता स्थान व वक्त के अनुसार कम या अधिक हो सकती है परंतु उपस्थिति अनिवार्य है। दक्षिणी राजस्थान के स्वैच्छिक संगठनों के अध्ययन के द्वारा स्थानीय शासन में इनकी भूमिका का विस्तृत वर्णन करेंगे। उदयपुर जिले में दो स्वैच्छिक संस्थान पंचायतीराज प्रतिनिधियों के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रम व लोगों में जागरूकता व अभियान चलाकर स्थानीय स्वशासन में सक्रिय भूमिका अदा कर रहे हैं।

सहभागिता: सरकारी व गैरसरकारी संस्थान

पंचायतीराज संस्था एवं स्वैच्छिक संस्था स्थानीय विकास के दो महत्वपूर्ण अभिकरण ग्रामीण समाज में माने जाते हैं। ये दो अभिकरण संयुक्त रूप से किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करने में सक्षम हैं। नागरिक सहभागिता एवं संयुक्त प्रयास सीमित क्षेत्रों में देखने को मिलता है। हाल के 73वें एवं 74वें संवैधानिक सुधार अधिनियम के तहत स्थानीय निकायों को सुदृढ़ किया गया है जिसमें स्वैच्छिक संस्थाओं की सहयोगी भूमिका का भी प्रावधान है। सच पूछा जाए तो पंचायतीराज संस्था एवं स्वैच्छिक संस्थाओं के बीच काफी समानता है। भारत में पंचायतीराज व्यवस्था की गहरी जड़ें प्राचीन काल एवं आरंभिक सभ्यता से मिलता है। 'पंचायत' शब्द प्राचीन काल में एक ऐसे सामाजिक संगठन को कहा गया है जो स्थानीय निकाय के रूप में आदर्श मानी जाती थी। चाहे वह जाति पंचायत हो या ग्राम पंचायत। यह स्वायत्त संस्था के रूप में संपूर्ण ग्राम के साझे हित पर केंद्रित थी। जहां तक सदस्यता का सवाल है वह पूर्णरूपेण स्वायत्त, स्वैच्छिक था क्योंकि गांव के सभी व्यक्तियों को उस साझे हित में सम्मिलित होना ही पड़ता था। इस तरह पंचायतीराज व्यवस्था, जो आज सरकार का अंग है, प्राचीन काल से समाज के स्थानीय निकाय थे। भारत में स्वतंत्रता के बाद देश के नेताओं ने पंचायतीराज व्यवस्था के महत्व को समझते हुए इसे सरकारी तंत्र के स्थानीय शासन का महत्वपूर्ण अंग बनाया एवं संवैधानिक स्थिति प्रदान की।

दूसरी तरफ स्वैच्छिक संस्था भी प्राचीन स्वरूप में परोपकार, राहत कार्य, व्यक्तिगत अनुदान एवं समाज कल्याण की भावना से प्रेरित रही है। यह एक मानीय प्रवृत्ति है जो समाज के पिछड़े तबके, अपंग, असहाय व्यक्ति के प्रति नैतिक जिम्मेदारी समझी जाती थी एवं है। इस प्रकार प्राचीन स्वैच्छिक संगठन नैतिक विचारधारा से प्रेरित थी न कि राजनीतिक विचारधारा से। (उपेंद्र बक्षी, 1986) स्वतंत्रोपरांत आधुनिक स्वैच्छिक संस्था परंपरागत संस्थाओं से विषयवस्तु, दृष्टिकोण एवं प्रभाव में काफी अलग है। आधुनिक स्वैच्छिक संस्था समाज के विस्तृत विषयों से संबंधित है। सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक विचारधारा काफी हद तक नैतिक व धार्मिक क्षेत्रों तक ही सीमित थी। सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, समानता का अधिकार जैसे मुद्दे परंपरागत संस्थाओं के नहीं बल्कि आधुनिक संस्थाओं के विषयवस्तु हैं।

इस प्रकार पंचायतीराज एवं स्वैच्छिक संस्था, दोनों अपने मूल स्वरूप में समान उद्देश्य, स्रोत एवं समाज के स्थानीय निकाय हैं। पंचायतीराज को ग्रामस्तर पर शासन का एक राजनीति रहित अंग के रूप में बनाया गया है। पंचायत के प्रतिनिधियों का चुनाव बिना किसी पार्टी के आधार पर निर्धारित है, यद्यपि अप्रत्यक्ष रूप से पार्टियां जुड़ी होती हैं। इसी तरह स्वैच्छिक संस्था भी राजनीति से रहित संगठन है जो सिर्फ समाज कल्याण एवं नागरिक सहभागिता को प्रोत्साहित करने के लिये संगठित है। दूसरी महत्वपूर्ण समानता यह भी देखी जा सकती है कि दोनों संस्थाएं महात्मा गांधी के विचारों से प्रेरित है। जवाहरलाल नेहरू ने राजस्थान पंचायतीराज व्यवस्था के उद्घाटन भाषण में कहा, "हमलोग भारत में लोकतंत्र की जड़ें स्थापित कर रहे हैं.....यह ऐतिहासिक कार्य अवश्य ही महात्मा गांधी के

इच्छाओं की पूर्ति करेगा और उन्हें यह जानकर खुशी होती कि इसका शुभारंभ उनके जन्म दिन 2 अक्तूबर को हो रहा है"। इस प्रकार महात्मा गांधी भारतीय स्वैच्छिक संस्थाओं के उत्थान में भी उत्प्रेरक माने जाते हैं। उन्होंने कई संस्थाओं का गठन भिन्न-भिन्न उद्देश्यों के लिये किया, जैसे- हरिजन सेवक संघ, ग्रामोद्योग संघ, हिंदुस्तान तालीम संघ, अदिवासी सेवा मंडल आदि। आज़ादी के बाद काफी संख्या में स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना उनके सिद्धांतों को ध्येय में रखकर किए गए हैं। उनमें भारत सेवक समाज, खादी एवं ग्रामोद्योग संघ, गांधी पीस फाउंडेशन, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक संघ प्रमुख हैं। गांधीजी के चमत्कृत नेतृत्व को उनके अनुयायी विनोबा भावे, जयप्रकाश नारायण, ए.वी. ठक्कर, बाबा आम्टे, सुंदरलाल बहुगुणा ने आगे कायम रखा।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पंचायतीराज एवं स्वैच्छिक संस्था समान स्रोत, समान उद्देश्य एवं समान ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर तैयार हुई है। यद्यपि, वर्तमान में ये दो भिन्न निकाय सरकार एवं समाज का प्रतिनिधित्व करते हैं। पहले में शक्ति का अनुगमन राष्ट्रीय राजधानी से ग्राम की ओर एवं दूसरे का उद्भव स्थानीय नागरिकों के पहल पर आधारित है। यह शक्ति सामाजिक सहभागिता द्वारा प्राप्त होती है। पंचायत के विपरीत शक्ति का अनुगमन गांव से राष्ट्रीय राजधानी की ओर होती है। इसके अतिरिक्त दोनों संस्थाओं के बीच संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक भिन्नताएं भी है। स्वैच्छिक संस्थाओं का असमान वितरण, स्वरूप एवं मुद्दे इसे पंचायतीराज व्यवस्था से भिन्न दर्शाती हैं। कई ऐसे गांव हैं जहां कोई स्वैच्छिक संस्था कार्यरत नहीं हैं वहीं दूसरी ओर कई क्षेत्रों में इसका घनत्व काफी अधिक है। पंचायतीराज व्यवस्था हर गांव, कस्बे से जुड़ा है और लगभग समान स्वरूप है। वर्तमान आंकड़ों के अनुसार, भारत में लगभग 2,50,000 ग्राम पंचायत, 5,000 पंचायत समिति ब्लॉक स्तर पर एवं 500 से अधिक जिला परिषद हैं।

उदयपुर में स्वैच्छिक संस्थाओं की होड़

उदयपुर जिला दक्षिण राजस्थान में शासन का केंद्र बिंदु है एवं राजस्थान में विलय से पूर्व यह मेवाड़ रियासत की राजधानी हुआ करता था। झीलों का शहर उदयपुर को अगर हम स्वैच्छिक संस्थाओं का जिला कहें तो अतिश्योक्ति नहीं होगी, क्योंकि यहां संस्थाओं का घनत्व सर्वाधिक है। सोसाइटी रजिस्ट्रार के अनुसार, वर्ष 2001-02 में 308 स्वैच्छिक संस्था जिले में पंजीकृत किए गए। सिर्फ पंजीकृत संस्था वर्ष 1987 के बाद लगभग 2,400 हैं जो एक जिले में काफी अधिक घनत्व का परिचायक है। मेवाड़ समाज राजस्थान के अन्य भागों की तरह परंपरा, लोकरीति एवं लंबे इतिहास के लिये लोकप्रिय है। स्वैच्छिक अनुदान एवं संस्था काफी अंश में धार्मिक एवं सांस्कृतिक विचारों से प्रेरित है।

1991 की जनगणना के अनुसार, दक्षिण राजस्थान में अनुसूचित जनजातियों का घनत्व राज्य में सर्वाधिक है जो लगभग 53.53 प्रतिशत है एवं जिलावार देखा जाए तो राजस्थान के उदयपुर जिले में जनजातियों की जनसंख्या सबसे अधिक है जो राज्य की कुल जनजातियों का 19.41 प्रतिशत है। राजस्थान में 12 जनजातीय समूह हैं। भील एवं मीणा बहुसंख्यक हैं, जिनका अनुपात लगभग 93 प्रतिशत है। विकास के क्रम में दक्षिण राजस्थान के जनजातियों की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक स्थिति काफी निम्न है। राज्य के अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता दर 10.27 प्रतिशत, खासकर ग्रामीण महिला जनजाति साक्षरता मात्र 0.93 प्रतिशत है। भीलों में साक्षरता दूसरे बहुसंख्यक जनजाति मीणा की तुलना में काफी अंतर है जो क्रमशः 1.99 एवं 50.99 प्रतिशत है। आर्थिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े भीलों की अधिकांश जनसंख्या दक्षिण राजस्थान में रहती है। शायद यही सब कारण है कि दक्षिण राजस्थान के उदयपुर में सर्वाधिक स्वैच्छिक संस्थाएं कार्यरत हैं।

72वां एवं 73वां संवैधानिक संशोधन पंचायतीराज व्यवस्था को कई नये अधिकार देकर संरचनात्मक एवं प्रकार्यात्मक शक्ति प्रदान करता है। इस संशोधन में कई महत्वपूर्ण बदलाव इस प्रकार हैं: 29 नये विषयों का पंचायत को अधिकार, चुनाव के कठोर नियम, पंचायत को संसाधन का सतत सहयोग, स्वैच्छिक संस्थाओं की भागीदारी इत्यादि। 1996 से पंचायतीराज का विस्तार अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में भी किया गया है, जो पहले अपवाद थे। इस तरह जनजातियों में पंचायतीराज का विस्तार एवं स्वैच्छिक संस्थाओं की भागीदारी स्थानीय स्वशासन में महत्वपूर्ण कदम है। जनजातियों में सामाजिक समुदाय की भावना प्रबल मानी जाती है। स्वैच्छिक संस्थाओं की भागीदारी एवं सामुदायिक भावना स्थानीय स्वशासन व विकास की प्रक्रिया में उत्प्रेरक का कार्य करेगी। दूसरी तरफ स्वशासन में एकरूपता एवं एक समान व्यवस्था की ओर मार्ग प्रशस्त करेगी।

इस प्रयास में स्वैच्छिक संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। इन संस्थाओं की मुख्य रूप से दो भूमिका उल्लेखनीय है, पहला, मध्यस्थ की भूमिका या मध्यस्थता राज्य के स्थानीय निकाय एवं नागरिकों के बीच रखा जा सकता है। निःस्वार्थ भाव से स्थानीय लोगों द्वारा किया गया प्रयास सहभागिता के मार्ग को प्रशस्त करता है। दूसरा, स्वैच्छिक संस्थाएं पंचायत व्यवस्था का प्रशिक्षण देकर इसके मज़बूत आधार को रखने में काफी सफल है।

उदयपुर के पंचायतीराज व स्वैच्छिक संस्थाओं के साझे प्रयास से स्थानीय स्वशासन विकास में काफी अंश में सफल प्रतीत होती है। जहां एक तरफ सरकारी संस्थाएं पंचायतीराज के द्वारा शासन में भागीदारी प्रदान करती है वहीं इसकी ओर गैरसरकारी संस्थाएं संसाधनों के समुचित प्रबंधन के द्वारा नागरिक सहभागिता को प्रोत्साहित करती है। अगर इस साझे कार्यक्रम को समाज के अन्य क्षेत्रों में भी क्रियान्वित किया जाए तो शायद यह दोनों संस्थाओं का सम्मिलित प्रयास स्थानीय समस्याओं से जूझने में ज्यादा कारगर साबित हो सकती है। ❑

(लेखक स्कूल ऑफ कॉन्टीन्यूइंग एजुकेशन, इंदिरा गांधी नेशनल ओपन यूनिवर्सिटी, नयी दिल्ली से संबद्ध हैं)

कानूनी संरक्षण के बावजूद महिलाओं की दयनीय स्थिति

○ रवि भूषण वर्मा

यद्यपि बलात्कार के रोकथाम के लिये सरकार द्वारा कई कानून बनाए गए हैं फिर भी अपराधियों की संख्या में दिनोदिन वृद्धि होती गई है। सरकार द्वारा बनाए गए सारे कानून इसके आगे बौने साबित हो रहे हैं। आज के समाज में स्त्री को हर जगह ज़िंदगी और मौत से लड़कर बचना और आगे बढ़ना पड़ रहा है

आज समाज में औरत को हर कदम पर अपने अस्तित्व के लिये संघर्ष करना पड़ता है। कहीं पर उसे अपने मां-बाप से, कहीं पर अपने औरत रूपी बहन या कहीं पर उसे अपने पति से या कहीं पर समाज के अन्य लोगों से संघर्ष करना पड़ता है। आखिरकार इस सृष्टि के जन्मदाता का भाग्य इतना दयनीय क्यों है? बालिका जब अपने मां के गर्भ में आती है तभी से उसके साथ भेदभाव शुरू हो जाता है। यद्यपि कहने को तो ऐसे बहुत सारे नियम बना दिए गए हैं कि गर्भ में पल रही संतान का लिंग जांच करना गैरकानूनी है और इसमें यह भी कहा गया है कि लिंग परीक्षण केवल अनिवार्य या फिर डॉक्टर द्वारा विशेष परिस्थिति में ही की जाए। भ्रूण लिंग परीक्षण संबंधी विधेयक की धारा 4 में प्रावधान किया गया है कि अन्य जांच (लिंग निर्धारण के अलावा) की जा सकती है बशर्ते गर्भवती महिला की उम्र 35 वर्ष से अधिक हो, दो या दो से अधिक बार गर्भपात हो चुका हो, मानसिक रोग की परंपरा हो, ऐसी स्थिति में धारा 5 के अनुसार गर्भवती महिला की लिखित सहमति लेना अनिवार्य है। लिंग विधेयक की धारा 22 में लिंग परीक्षण संबंधी प्रावधानों में कहा गया है कि लिंग परीक्षण के बारे में किसी भी प्रकार का विज्ञापन, नोटिस, परिचयपत्र, प्रचार-प्रसार नहीं किया जा सकता। इस तरह के विज्ञापन पर पूर्ण प्रतिबंध है और इसका उल्लंघन होने पर दोषी व्यक्ति को तीन साल तक की कैद और दस हजार रुपये का जुर्माना भी हो सकता है। फिर इसी तरह धारा 23 में लिंग परीक्षण संबंधी प्रावधानों का उल्लंघन करने पर डॉक्टर के साथ अन्य सहयोगियों को भी तीन साल तक की कैद और 10 हजार रुपये तक का जुर्माना हो सकता है। पर यह कितने आश्चर्य की बात है कि लड़की को अपने मां के गर्भ में सुरक्षित रखने के लिये कानून बनाने पड़ रहे हैं और इसके बाद भी मां-बाप लड़कियों की गर्भ में ही हत्या कर रहे हैं। आज देश में बढ़ती जनसंख्या के साथ ही लिंगानुपात की स्थिति भी चिंताजनक है। यह अनुपात शहरों के रिहाइशी इलाकों व झुग्गी-झोपड़ी दोनों जगहों पर है। झुग्गी-झोपड़ी में प्रतिहजार बालकों की संख्या पर 919 बालिकाएं हैं जबकि शहरों के रिहाइशी इलाकों में प्रतिहजार बालकों पर 904 बालिकाएं है। देश के 25 राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में पांडिचेरी में यह अनुपात सबसे अच्छी है। यहां एक हजार बालकों पर 998 बालिकाएं हैं जबकि पंजाब में यह सबसे कम एक हजार पर 821 है। इसके अलावा उत्तर प्रदेश में प्रति हजार बालकों पर 948, बिहार में 877, दिल्ली 919 बालिकाएं हैं। जबकि कुल जनसंख्या का लिंग अनुपात एक हजार बालकों पर 933 बालिकाएं हैं।

पर यदि बालिका अपने मां-बाप की खुशी से इस दुनिया में जन्म ले लेती है तो उसके बाद उसके मां-बाप को बालिका की सुरक्षा की चिंता आ घेरती है। क्योंकि यह देखा जा रहा है कि छोटी उम्र की बालिकाओं के साथ भी बलात्कार की घटनाएं घट रही हैं। यही कारण है कि बालिकाओं के मां-बाप उसे अपने पड़ोस में भी जाकर खेलने की अनुमति नहीं देते हैं और बचपन में भी बालिका जी भरकर खेल नहीं पाती। जबकि इसी बालिका का भाई अपने पड़ोस में या कहीं अन्यत्र भी अपने दोस्तों के संग जी भरकर खेलता है। आखिर यह दोहरी भावना क्यों है? स्पष्ट कारण है, लड़कियों की असुरक्षा।

लड़कियां जब स्कूल जाने लगती हैं वहां भी असुरक्षा की भावना सामने आती है। कई बार यह देखने-सुनने में आता है कि स्कूल के लड़के अपने स्कूल की ही लड़कियों के साथ कई तरह की बदतमीजी कर जाते हैं और फब्तियां कसने से भी नहीं चूकते। इन सबके परिणामस्वरूप लड़कियां अपनी सुरक्षा के लिये अधिकांशतः अपनी सहेलियों के साथ ही रहने को मज़बूर होती हैं।

समाज कल्याण मंत्रालय के लिये तैयार की गई जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो. वी. राघवन द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट में यह कहा गया है कि अधिकांश बलात्कारी बिना दंडित हुए ही छूट जाते हैं। 3 से 6 महीने के बीच अभियुक्तों का समाज में पुनर्वास भी हो जाता है। पुनर्वास के साथ ही वह पीड़ित पक्ष से बदला लेने की स्थिति में आ जाता है। इसका कारण है, भारतीय संविधान में बलात्कारियों को दंडित करने के लिये बनी कानून में खामियां।

भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 375 (6) के अनुसार किसी भी पुरुष द्वारा 16 वर्ष से कम उम्र की महिला की सहमति या असहमति से उसके साथ शारीरिक संबंध स्थापित करना बलात्कार है। ऐसी स्थिति में बलात्कारी को कम से कम सात साल की कैद जो आजीवन कैद भी हो सकती है या दस साल तक कैद या जुर्माना है। भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 155 (4) में यह प्रावधान है कि गवाह की विश्वसनीयता समाप्त करने के लिये आवश्यक है "अगर किसी व्यक्ति पर बलात्कार या बलात्कार करने का प्रयास करने का आरोप हो तो उसे यह सिद्ध करना चाहिए कि पीड़िता आमतौर से अनैतिक चरित्र की महिला है।"

इस तरह इस धारा के अनुसार हर उस व्यक्ति को यह अधिकार मिल गया कि वह जब भी चाहे बलात्कार करने के बाद महिला का अनैतिक चरित्र प्रमाणित करके बच जाए।

वर्ष 2004 में केवल दिल्ली में 540 महिलाओं के साथ बलात्कार हुआ, फिर 2005 में तो इससे भी 19 प्रतिशत आगे बढ़कर यह संख्या 642 पर पहुंच गई।

प्रत्येक वर्ष अक्षय तृतीया (तीज) के शुभ दिन में कई हजार अबोध, नाबालिग यहां तक की दूध पीते बच्चों को भी विवाह के पवित्र बंधन में बांध दिया जाता है जबकि बाल-विवाह निरोधक अधिनियम, 1929 और हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 5 में विवाह के लिये अन्य शर्तों में से एक शर्त यह है कि "विवाह के समय दूल्हे की उम्र 21 साल और दुल्हन की उम्र 18 साल से कम नहीं होनी चाहिए।" अगर शादी के समय दूल्हे तथा दुल्हन की उम्र इससे कम है तो हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 18 के अनुसार दोषी व्यक्ति को 15 दिन तक की कैद या एक हजार रुपया जुर्माना या फिर दोनों हो सकता है। इसके बाद भी प्रतिदिन बाल-विवाह का मसला सामने आता रहता है। यहां तक की दुधमुंहे बच्चे की भी शादी कर दी जा रही है।

आज लड़कियों की शादी मां-बाप के लिये एक बहुत बड़ी समस्या हो गई है। इसका मुख्य कारण है दहेजरूपी दानव। हालांकि दहेज का वर्णन रामायण में भी देखने को मिलता है जिसमें कहा गया है सीता की शादी के समय राजा जनक ने अपने इच्छानुसार दान-दहेज दिए थे और दहेज के रूप में हाथी-घोड़े, नौकर-चाकर तथा हीरे-जवाहरात थे, पर आज दहेज माता-पिता की इच्छानुसार नहीं, वर पक्ष के दबाव के परिणामस्वरूप एक कुरीति बन गई है। इसके लिये मां-बाप को कई जगह से कर्ज़ लेना पड़ता है। बावजूद इसके यदि लड़की की शादी के बाद वर पक्ष संतुष्ट नहीं होते हैं तो लड़की पर और अधिक दहेज लाने के लिये दबाव डालते हैं और कई जगह इसके परणिामस्वरूप वधु की हत्या कर दी जाती है या उसको जिंदा जला दिया जाता है। जबकि यह अपराध साबित हो जाने पर आजीवन कारावास तक की सजा का प्रावधान कानून में है। इस कानून के अंतर्गत यदि किसी लड़की की मृत्यु होती है तो जरा भी शक होने पर या शिकायत होने पर दहेज संबंधी मामला बन सकता है। परंतु इस प्रावधान के बाद भी प्रतिवर्ष सैकड़ों बहुओं को दहेज कम लाने या अन्य कारणों से मार डाला जाता है या फिर जिंदा जला दिया जाता है। और जगहों को छोड़ भी दें तो केवल दिल्ली में ही प्रतिमाह करीब 9 महिलाएं दहेज की भेंट चढ़ जाती हैं और बहुत सारे मामले तो पुलिस रिकार्ड में आ भी नहीं पाते।

कई महिलाओं को दहेज कम लाने के कारण तलाक भी दे दिया जाता है जबकि हिंदू समाज में कि विधवा या तलाकशुदा स्त्री की स्थिति जगजाहिर है। तलाक के रोकथाम के लिये सरकार द्वारा कानून भी बनाए गए हैं। भारतीय दंड संहिता, 1973 की धारा 125 में 1 अप्रैल, 1974 से यह प्रावधान है कि अगर कोई साधनसंपन्न व्यक्ति अपनी पत्नी, बच्चों और माता-पिता की देखभाल या भरण-पोषण करने में उपेक्षा करता है और उससे इंकार करता है तो पत्नी, बच्चे या माता-पिता जो अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं गुजारा भत्ता ले सकते हैं। इस कानून के अंतर्गत गुजारा भत्ता कानूनी रूप से वैध विवाहित (तलाकशुदा) पत्नी को ही मिल सकता है, दूसरी पत्नी को नहीं, जबकि बच्चे वैध हों या अवैध, गुजारा भत्ता ले सकते हैं। गुजारा भत्ता लेने के लिये यह सिद्ध करना ज़रूरी है कि पत्नी, बच्चे या मां-बाप अपना गुजारा करने में असमर्थ हैं। इस कानून की उपधारा-3 के अंत में एक स्पष्टीकरण दिया गया है कि अगर पति ने किसी अन्य महिला से विवाह कर लिया तो यह समझा जाएगा कि पत्नी के लिये पति से अलग रहने का उचित कारण मौजूद है। लेकिन उपधारा-4 में प्रावधान है कि अगर पत्नी व्याभिचारपूर्ण जीवन व्यतीत कर रही है तो वह अपने पति से गुजारा भत्ता लेने की अधिकारी नहीं है।

ऊपर वर्णित भारतीय महिलाओं की स्थिति देखकर यही लगता है कि भारतीय महिलाएं बहुत ही दयनीय स्थिति से गुजर रही हैं। इन्हें विभिन्न प्रकार की अशक्तताओं एवं असमर्थताओं का सामना करना पड़ता है। महिलाएं आज भी शैक्षिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से बहुत पीछे हैं। हालांकि भारतीय संविधान में महिलाओं के हितों की रक्षा के लिये अनेकों उपबंध सम्मिलित किए गए हैं। संविधान के अंतर्गत उपलब्ध मौलिक अधिकार पुरुषों और महिलाओं पर समान रूप से लागू हैं। स्वतंत्रता, समानता, सभी सरकारी सेवाओं में एक समान अवसर व कई अन्य अधिकारों की उपलब्धि में लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव करने की इजाजत संविधान के अंतर्गत नहीं दी गई है। समानता के अधिकार से संबद्ध संविधान के अनुच्छेद 15 के अधीन नागरिकों के बीच लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता, लेकिन उसी अनुच्छेद में कहा गया है कि राज्य महिलाओं एवं बच्चों के लिये विशेष व्यवस्था कर सकता है। शोषण के विरुद्ध मौलिक

अधिकार (अनुच्छेद-23) के अंतर्गत मनुष्यों में अनैतिक व्यापार पर प्रतिबंध लगाया गया है। राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के खंड में अनुच्छेद 39 में कहा गया है कि राज्य पुरुषों और महिलाओं को समान कार्य के लिये समान वेतन के सिद्धांत को लागू करेगा। सरकार इस बात का भी प्रयास करेगी की स्त्री या पुरुष श्रमिकों के स्वास्थ्य और शक्ति का दुरुपयोग न हो। इन्हीं सिद्धांतों के अंतर्गत कहा गया है कि सरकार ऐसी नीति का निर्देश करेगी जो सभी पुरुषों एवं स्त्रियों को जीवनयापन के लिये यथेष्ट तथा समान अवसर दे तथा अपनी आर्थिक क्षमता और विकास की सीमाओं के अनुसार सबको काम और शिक्षा पाने का समान अधिकार दिलाए और बेरोज़गारी, बुढ़ापा, बीमारी और अपाहिजपन या आवश्यकता की अल्पपूर्ति के अन्य मामलों में सबको वित्तीय सहायता दे। अनुच्छेद 42 में सरकार को महिला श्रमिकों के लिये प्रसूति सहायता उपलब्ध कराने के निर्देश दिए गए हैं। 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को निशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध कराने से संबद्ध संविधान के उपबंध लड़कों व लड़कियों पर समान रूप से लागू होते हैं।

संविधान में महिलाओं के हितों की रक्षा के लिये उपर्युक्त वर्णित अनुबंध के बाद भी इनकी स्थिति दयनीय है। भारतीय महिलाओं में रोज़गार करने के दौरान असुरक्षा की भावना बनी रहती है। कई जगह यह भी सुनने में आता है कि महिलाओं को पुरुषों की तुलना में कम वेतन मिलता है और कई जगह उन्हें यह सोचकर रोज़गार पर नियुक्त नहीं किया जाती है कि वे पुरुषों से कम काम करेंगी जो कि पूर्णत: असत्य है। इस तरह से समाज में महिला की स्थिति को देखकर यह प्रश्न उठता है कि क्या औरत में जन्म लेना एक गुनाह है? आखिर हम समाज के लोग यह भेदभाव क्यों रखे हुए हैं और तो और यह भेदभाव खुद मां-बाप के द्वारा ही किया जाता है, जिसका जीता-जागता उदाहरण है- भ्रूण हत्या। जो संपूर्ण समाज की जननी है उसी समाज के मर्द औरत को अपने पैरों तले कुचलने में अपनी मर्दानगी समझते हैं क्यों? यह बात ठीक है की मर्दों की ऐसी प्रवृत्ति ज्यादातर उन मर्दों में पाई जाती है जो कि कम पढ़े-लिखे हैं। यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि आज औरत कहीं सुरक्षित नहीं है।

यद्यपि बलात्कार के रोकथाम के लिये सरकार द्वारा कई कानून बनाए गए हैं फिर भी बलात्कारियों की संख्या में दिनोदिन वृद्धि होती गई है। सरकार द्वारा बनाए गए सारे कानून इसके आगे बौना साबित हो रहे हैं।

अंतत: यह कहना शायद उचित प्रतीत होता है कि आज के समाज में औरत को हर जगह ज़िदगी-मौत से लड़कर बचना और आगे बढ़ना पड़ रहा है। आज समाज में कोई ऐसा पद या स्तर नहीं है जिसमें औरत पुरुषों के बराबर नहीं है। चाहे वह डॉक्टर, वैज्ञानिक, इंजीनियर या अन्य कोई स्तर हो। तो क्या औरत मान ले कि चूंकि वह मर्द जाति की जननी है उसके हृदय में दया, करुणा, सहिष्णुता, परोपकार की भावना भरी हुई है यही कारण है कि उस पर अत्याचार होता है। ❑

Now Delhi in Patna *Admission open...*

IAS/PCS

सामान्य अध्ययन + इतिहास

MEDIUM : हिन्दी + ENGLISH

By :

शैलेन्द्र सिंह

With Proven Capacity

RENOWNED FOR ANALYTICAL APPROACH

Features:-
- व्याख्यान पर बल
- सम्पूर्ण पाठ्यक्रम के नोट्स
- Regular Test
- Regular Debate
- Answer Formating
- साक्षात्कार (Interview)

New Batch : 1st week of every month

अन्य विषय : निबंध / साक्षात्कार

THE ZENITH

An Innovative Institute for I.A.S.

G-4, Chandrakanta Apartment, Opp. Bata, Pandui Kothi Lane, Boring Road, Patna-800001,
Mob. : 9431052949 / 9835490233 E-mail : thezenithias@rediff.com

YH/2/7/05

मातृ मृत्यु दर में पिछड़ता भारत

2015 के लक्ष्य प्राप्त करना हुआ मुश्किल

गर्भधारण और बच्चे के जन्म से जुड़ी समस्याओं के कारण प्रत्येक पांच मिनट पर एक भारतीय महिला की मृत्यु होती है और प्रतिवर्ष लगभग 1,30,000 महिलाओं की मृत्यु हो जाती है। यह भारत में मातृ स्वास्थ्य पर यूनिसेफ की ताज़ा रिपोर्ट का निष्कर्ष है।

भारत में मातृ मृत्यु दर (एमएमआर) बहुत ज्यादा है। यहां प्रति 1,00,000 जीवित जन्म पर में 407 माताओं की मृत्यु होती है, जो कि राष्ट्रीय आबादी नीति (एनपीपी) 2010 के 1,00,000 प्रति जीवित जन्मों में 100 के लक्ष्य से लगभग चार गुना अधिक है।

रिपोर्ट के अनुसार मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों में एमएमआर बहुत अधिक है, 700 या उससे भी ज्यादा तथा असम, बिहार, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, उड़ीसा, राजस्थान और पश्चिम बंगाल में यह प्रति 1,00,000 जीवित जन्म पर 400 से अधिक है। पाया गया कि विगत छह वर्ष में एमएमआर में कोई उल्लेखनीय कमी नहीं आई है।

रिपोर्ट के अनुसार भारत में वर्ष 1997-98 में प्रति 1,00,000 जीवित शिशुओं के जन्म में 398 माताओं की मृत्यु होती थी जो वर्ष 2001-03 में घटकर 301 रह गई है। स्पष्ट है कि कमी की यह दर जब तक तेजी से बढ़ाई नहीं जाती वर्ष 2015 तक एमएमआर में तीन चौथाई की कमी लाने का सहस्राब्दि विकास लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकेगा। अल्पवय में शादी और बच्चे का जन्म इस समस्या के मुख्य कारण पाए गए हैं। भारत में करीब 50 प्रतिशत महिलाओं की शादी 18 वर्ष से पहले हो जाती है और उनमें से आधे 19 वर्ष की आयु तक अपने पहले बच्चे को जन्म देते हैं।

अन्य महत्वपूर्ण कारण जिसे रिपोर्ट में प्रमुखता से उद्धृत किया गया है, आपातकालीन प्रसूति सुविधा तक पहुंच का अभाव है। रिपोर्ट के अनुसार भारत में केवल 48 प्रतिशत प्रसव ही कुशल स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा कराए जाते हैं। अपर्याप्त पोषण, दो बच्चों के जन्म के बीच में कम अंतराल, रक्त संचार सुविधाओं का अभाव तथा परिवार के सदस्यों द्वारा समर्थन का अभाव भारत में उच्च एमएमआर के अन्य महत्वपूर्ण कारण हैं। ❑

अफ्रीका और एशिया में 90 प्रतिशत माताओं की मृत्यु

प्रसव के दौरान माताओं की मृत्यु की करीब 99 प्रतिशत घटनाएं विकासशील देशों में घटित होती हैं, जिनमें से 90 प्रतिशत अफ्रीका तथा एशिया में होती हैं। इन मौतों में से दो तिहाई वर्ष 2000 में निर्धनतम देशों में हुई। इस वर्ष कुल एक चौथाई माताओं की मृत्यु अकेले भारत में हुई।

बाल स्वास्थ्य : विकसित राज्यों में गिरावट

प्रत्येक आठ वर्ष पर किए जाने वाले राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (एनएफएचएस) के तीसरे एवं ताज़ा संस्करण के अनुसार 1998-1999 से, जबकि विगत सर्वेक्षण किया गया था, विकसित राज्य बच्चों को पोषण प्रदान करने के मामले में पिछड़ गए हैं। यद्यपि मानवीय विकास के अन्य सूचकों के मामले में उनमें सुधार हुआ है।

केरल में अत्यधिक कुपोषित बच्चों की संख्या लगभग दुगुनी हो गई है। कम वजन वाले बच्चों की संख्या भी बढ़ी है। एक अन्य सफल माने जाने वाले राज्य तमिलनाडु में भी कुपोषित बच्चों की संख्या में वृद्धि हुई है।

विगत आठ वर्षों के दौरान पश्चिम बंगाल में कुपोषित बच्चों की संख्या 13 प्रतिशत से बढ़कर 19 प्रतिशत हो गई है।

आंध्र प्रदेश में कम वजन वाले बच्चों की संख्या 9 प्रतिशत से बढ़कर 13 प्रतिशत हो गई है। एनीमिया के मामले में भी आंध्र प्रदेश पिछड़ गया है, जहां तीन वर्ष से कम आयु के 79 प्रतिशत बच्चों में खून की कमी दर्ज़ की गई है। 1998 के सर्वेक्षण में यह 72.3 प्रतिशत था।

मध्य प्रदेश में कुपोषित बच्चों की संख्या 54 प्रतिशत से बढ़कर 60 प्रतिशत हो गई है। सर्वेक्षण की रिपोर्ट के अनुसार बेहद कुपोषित बच्चों की संख्या, आठ वर्ष पहले के 20 प्रतिशत से बढ़कर 33 प्रतिशत हो गई है। इस परिणाम से चकित मध्य प्रदेश ने सर्वेक्षण के निष्कर्षों को नकार दिया है।

भूख और सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिये जाने जाने वाले उड़ीसा ने थोड़ी प्रगति दर्शाई है। यहां बेहद कुपोषित बच्चों की संख्या 28 प्रतिशत से घटकर 18 प्रतिशत हो गई है। ❑

अधोगामी सफर

आंकड़े प्रतिशत में	एचएफ एचएस 2 (1998)	एनएफ एचएस 3 (05-06)
केरल		
कुपोषित बच्चे	27	29
बेहद कुपोषित बच्चे	11	16
तमिलनाडु		
कुपोषित बच्चे	37	33
बेहद कुपोषित बच्चे	20	22
पंजाब		
कुपोषित बच्चे	28.7	27
बेहद कुपोषित बच्चे	7.1	9.1
गुजरात		
कुपोषित बच्चे	45	47
बेहद कुपोषित बच्चे	15	17
हिमाचल प्रदेश		
कुपोषित बच्चे	44	36
बेहद कुपोषित बच्चे	17	19
हरियाणा		
कुपोषित बच्चे	35	42
बेहद कुपोषित बच्चे	5	17

ख़बरों में

- **के.जी. बालाकृष्णन भारत के प्रधान न्यायाधीश बने**

सुप्रीम कोर्ट के वरिष्ठतम न्यायाधीश जस्टिस के.जी. बालाकृष्णन को भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त कर दिया गया है। मुख्य न्यायाधीश जस्टिस वाई.के. सभरवाल गत 14 जनवरी को सेवानिवृत हो गए तथा उनकी जगह श्री बालाकृष्णन ने कार्यभार ग्रहण किया। दिल्ली में अवैध दुकानों की सीलिंग का आदेश देकर पिछले पूरे वर्ष चर्चा में रहे जस्टिस सभरवाल ने 1 नवंबर, 2005 को मुख्य न्यायाधीश का पद संभाला था। के.जी. बालाकृष्णन को भारत का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त करने की औपचारिक घोषणा विधि और न्याय मंत्रालय ने एक अधिसूचना में की। बालाकृष्णन देश के 37वें मुख्य न्यायाधीश होंगे। वह 12 मई, 2010 तक देश के मुख्य न्यायाधीश के पद पर रहेंगे। इस हिसाब से उनका कार्यकाल अपेक्षाकृत लंबा यानी लगभग तीन वर्ष का होगा।

- **ओबीसी के लिये 27 प्रतिशत रिज़र्वेशन को स्वीकृति मिली**

केंद्रीय शैक्षणिक संस्थानों में अनुसूचित जाति, जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग को 27 प्रतिशत आरक्षण देने वाले विधेयक को राष्ट्रपति की मंजूरी मिल गई है। अब इसी साल से कुछ संस्थानों को छोड़कर बाकी जगह यह लागू हो जाएगा। आईआईएम इसे लागू करने वाले पहले संस्थान होंगे।

मानव संसाधन मंत्रालय के प्रवक्ता के अनुसार आईआईएम अहमदाबाद जैसे संस्थान इसे तीन साल के भीतर लागू करने के तहत पहले साल केवल छह प्रतिशत आरक्षण को प्रभावी करेंगे और 2009 तक यह पूरी तरह लागू हो जाएगा। चरणबद्ध तरीके से तीन साल में इसे पूरी तरह लागू करवाने में सरकार को करीब 9 हजार करोड़ रुपये आधाभूत ढांचा खड़ा करने में खर्च करने होंगे।

- **वंगारी एम. माथाई को इंदिरा गांधी शांति पुरस्कार**

अफगानिस्तान के राष्ट्रपति हामिद करजई को 2005 का प्रतिष्ठापूर्ण इंदिरा गांधी शांति पुरस्कार प्रदान किया गया। इसके साथ ही इंदिरा गांधी मेमोरियल ट्रस्ट की सचिव एवं दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने वर्ष 2006 के लिये यह पुरस्कार अफ्रीका की समाज सेविका और नोबेल पुरस्कार विजेता प्रो. वंगारी एम. माथाई को दिए जाने की घोषणा की।

- **उत्तरांचल बना उत्तराखंड**

उत्तरांचल अब उत्तराखंड के नाम से जाना जाएगा। राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने उत्तरांचल किए जाने संबंधी विधेयक को अपनी मंजूरी दे दी है।

- **भ्रष्टाचार के मुक़दमें में पूर्व अनुमति ज़रूरी नहीं होगी**

राजनेताओं के भारी भ्रष्टाचार और मनमानी के मामले में अपने कड़े रुख से देश में न्याय के प्रति विश्वास पैदा करने में जुटे सुप्रीम कोर्ट ने एक और महत्वपूर्ण फैसले में व्यवस्था दी कि भ्रष्टाचार के मामले में फंसे मुख्यमंत्रियों, मंत्रियों और अन्य बड़े लोकसेवकों पर मुक़दमा चलाने के लिये किसी प्रकार की अनुमति की ज़रूरत नहीं है।

- **महिला टीम ने बनाई खिताबी हैट्रिक**

भारतीय महिला क्रिकेट टीम ने अपनी ख्याति के अनुरूप प्रदर्शन करते हुए तीसरे महिला एशिया कप के फाइनल मेंश्रीलंका को आठ विकेट से करारी शिकस्त देकर खिताब की हैट्रिक बनाई। मिताली राज की अगुवाई वाली टीम को शुरू से ही खिताब का दावेदार माना जा रहा था और सवाई मानसिंह स्टेडियम में जब टॉस जीतने के बाद पहले बल्लेबाजी के लिये मैदान पर उतरी श्रीलंकाई टीम 44.1 ओवर में केवल 93 रन पर सिमट गई तो भारत की जीत महज औपचारिकता लगने लगी थी। भारत ने केवल 27.5 ओवर में दो विकट पर 95 रन बनाकर खिताब अपने नाम किया।

- **चीनी फिल्म को स्वर्ण मयूर**

गोवा की राजधानी पणजी में संपन्न भारत के अंतरराष्ट्रीय फिल्म महोत्सव में चीनी फिल्म *दि ओल्ड बारबर* को सर्वोच्च पुरस्कार स्वर्ण मयूर (गोल्डन पिकॉक) और दक्षिण कोरिया और बांग्लादेश की फिल्मों को रजत मयूर (सिल्वर पिकॉक) से सम्मानित किया गया। *दि ओल्ड बारबर* का निर्देशन हासी चाउली ने किया है पांच सदस्यीय जूरी ने इसे सर्वोच्च पुरस्कार से सम्मानित करने का फैसला किया। पुरस्कारस्वरूप एक प्रशस्तिपत्र और दस लाख रुपये नगद दिए गए। इस मुक़ाबले में भारत, जर्मनी और अर्जेंटीना सहित दस देशों की फिल्में थीं। भारत की ओर से तमिल फिल्म *श्रीनगरम* और अरुणाचल प्रदेश की *सोनम* स्पर्धा में शामिल थी।

- **उत्पाद पर देना होगा फोन नंबर**

उपभोक्ताओं के लिये अच्छी ख़बर है। किसी कंपनी के उत्पाद से संतुष्ट नहीं होने पर या उसमें किसी तरह की कमी की स्थिति में उपभोक्ता अब सीधे उत्पादक कंपनी के पास अपनी शिकायत भेज सकेंगे। इसके लिये कंपनियों को उत्पादों पर शिकायत दर्ज़ कराने के लिये फोन नंबर और पता देने का निर्देश दिया गया है। ❑

अंधता: कारण और निवारण

❍ हरनारायण महाराज

भारत में जितना अंधापन है उतना विश्व के अन्य किसी देश में नहीं है। नेत्र विशेषज्ञों के अनुसार विश्व में कुल मिलाकर दो करोड़ लोग लाइलाज ढंग से अंधे हैं। इनमें से साठ लाख भारत में ही हैं। इनके अतिरिक्त सत्तर लाख ऐसे भी अंधे हैं जिनका इलाज हो सकता है। 'नेशनल सोसायटी फॉर प्रिवेंशन ऑफ ब्लाइंडनेस' ने एक सर्वेक्षण में बताया था कि जनसंख्या में अंधों का अनुपात ढाई प्रतिशत है।

अंधेपन की इस विकराल समस्या का हल न केवल मानवीय दृष्टि से ही आवश्यक है अपितु आर्थिक दृष्टि से भी आवश्यक है। लेखा विशेषज्ञों के अनुसार अंधेपन के कारण बीस हजार करोड़ रुपयों की पूंजी फंसी हुई है। यदि देश के अंधों को अर्थोपार्जन योग्य बनाया जा सके तो न केवल उक्त पूंजी बचेगी अपितु इतनी ही पूंजी वे कमा भी लेंगे।

दृष्टिहीन कल्याण सप्ताह पर विशेष

अंधेपन का कारण

कुपोषण, रोग, नेत्ररोग, अंधविश्वास, गलत चिकित्सा तथा चोटें और दुर्घटनाएं एवं मानसिक तनाव अंधेपन के कारण हैं। यदि इन कारणों को दूर किया जा सके तो अंधेपन से मुक्ति मिल सकती है।

कुपोषण

अंधता का प्रमुख कारण आहार में विटामिन 'ए' की कमी है। प्रसिद्ध आहार विशेषज्ञ गोलार्ड हासर का कथन है कि आहार में विटामिन 'ए' की कमी के कारण आंखें खराब होती हैं। अधिक आयु के कारण मोतियाबिंद होता है, यह मान्यता गलत है। यदि मोतियाबिंद प्रारंभ होने पर मनुष्य आहार में विटामिन 'ए' लेने लगे तो मोतियाबिंद का आगे बढ़ना रुक जाता है।

विटामिन 'ए' का विशेष प्रभाव आंख, फेफड़ा, चर्म तथा शरीर के भीतर की कोमल झिल्लियों पर पड़ता है। इसके अभाव में ये भाग दुर्बल रह जाते हैं और इनमें तरह-तरह के रोग हो जाते हैं।

अंधेपन का प्रारंभ गर्भावस्था से ही हो जाता है। बच्चों का जन्मांध या जन्म से ही नेत्ररोगी होने का प्रमुख कारण उनकी जननी को गर्भकाल में विटामिन 'ए' युक्त आहार का न मिलना। है। अत: गर्भवती महिलाओं को पौष्टिक आहार के साथ-साथ विटामिन 'ए' अवश्य मिलना चाहिए। नेत्ररोगों से बचने के लिये सभी स्त्री-पुरुषों को चाहे वे शिशु, किशोर, युवक, प्रौढ़, वृद्ध किसी भी अवस्था के हों, विटामिन 'ए' युक्त आहार अवश्य लेना चाहिए।

विटामिन 'ए' युक्त आहार सामान्य आहार से महंगा नहीं होता, हर व्यक्ति जो दो जून की रोटी जुटा लेता है, उसे यह आहार आसानी से उपलब्ध हो सकता है। आवश्यकता है केवल इसके ज्ञान की।

विटामिन 'ए' के धनी पदार्थ

हरे धनिये की पत्ती, सहजन की पत्ती, चने, चौलाई, पालक, बथुआ की साग, मूली व गोभी की पत्ती, मेंथी की पत्ती, हरी मिर्च, नीम की पत्ती, टमाटर, गाजर, पका आम तथा मछली व मछली के तेल में बहुतायत से विटामिन 'ए' पाया जाता है। सभी तरह की हरी पत्तियों की सब्जियों में प्रचुरता से विटामिन 'ए' होता है। उक्त पदार्थों या सब्जियों में से किन्हीं एक या दो का सेवन करने मात्र से ही आवश्यक विटामिन 'ए' की पूर्ति हो जाती है।

विटामिन 'ए' की पूर्ति का सहज उपाय

प्रतिदिन हरी सब्जियों के केवल 100 ग्राम पत्ती या मूली के पत्ते खाने मात्र से विटामिन 'ए' की पूर्ति हो जाती है। जो विटामिन 'ए' युक्त पदार्थों का सेवन न कर सकें उन्हें विटामिन 'ए' की एक गोली कभी-कभी खा लेनी चाहिए। ऐसा करने से कभी किसी नेत्ररोग की शिकायत नहीं होगी।

अंधविश्वास तथा गलत इलाज

नेत्ररोग होने पर अनेक लोग आज भी झाड़-फूंक, तंत्रमंत्र, टोटके आदि के चक्कर में पड़कर अपनी आंखें खराब कर लेते हैं। बहुत से लोग नीमहकीमों या झोलाछाप डाक्टरों से इलाज कराकर अपनी नेत्र ज्योति खो बैठते हैं। आंखों से बढ़कर हमारे लिये कोई दूसरी मूल्यवान वस्तु नहीं है। इसलिये हमें नेत्र विशेषज्ञों से इलाज कराना चाहिए तथा उन्हीं से चश्मा बनवाना चाहिए।

मोतियाबिंद मनुष्य को अंधा बना देता है। अंधे होने पर इसका इलाज ऑपरेशन द्वारा होता है। योग्य चिकित्सकों द्वारा इलाज या ऑपरेशन कराने पर आंख की रोशनी लौट आती है।

योग्य चिकित्सकों से या समय पर मोतियाबिंद का ऑपरेशन न कराने के कारण अनेक लोग अंधे हो जाते हैं। एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि देश में जितने अंधे हैं उनमें से दस प्रतिशत अंधे मातियाबिंद के कारण हुए

(शेषांश पृष्ठ 47 पर)

त्रिदोष नाशक आंवला

○ प्रेमलता मौर्य

आंवला यूकोरेबियेसी कुल का सदस्य है, जिसे वनस्पतिशास्त्री एमाब्लिका आफिलिनेलिस के नाम से जानते हैं। आंवले को संस्कृत में आमलकीया धांत्रीफल, फारसी में अमलह, अरबी में आमलज, हिंदी में आंवला या आमला आदि नामों से जाना जाता है। इसके फूल हरापन लिये पीले और मुख्यत: पत्तों के नीचे की तरफ छोटे-छोटे गुच्छों में लगते हैं। जुलाई-अगस्त में इसके फल आने लगते हैं जो फरवरी-मार्च में पककर तैयार होते हैं। फलों का स्वाद पहले कसैलापन लिये हुए खट्टा व बाद में हल्का मीठापन लिये होता है।

आंवला विटामिन 'सी' का सबसे बड़ा स्रोत है। इसमें विटामिन 'सी' नारंगी की तुलना में 20 गुना अधिक पाया जाता है। विटामिन 'सी' ऐसा नाजुक तत्व है, जो अधिक गर्मी के प्रभाव से नष्ट हो जाता है फलस्वरूप अन्य साग-सब्जियों में मिलने वाला विटामिन 'सी' आग की संसर्ग में आने के कारण नष्ट हो जाता है। मजे की बात यह है कि आंवले में विद्यमान विटामिन 'सी' किसी भी दशा में नष्ट नहीं होता। आंवले में प्राकृतिक रूप से अम्लता आदि कुछ ऐसे तत्व होते हैं, जो विटामिन 'सी' को नष्ट होने से बचाते हैं। इसके अलावा आंवले में गैलिक एसिड, ग्लूकोज, टैनिक एसिड, कष्ठौज, अलब्यूमिन आदि तत्व भी पाए जाते हैं। आंवले के गूदे में आद्रता 81.2, प्रोटीन 0.5, खनिज पदार्थ 0.7, वसा 0.1, कार्बोहाइड्रेट 14.1, तंतु 3.4, कैल्सियम 0.05, फास्फोरस 0.02 प्रतिशत होता है। 100 ग्राम आंवले में 600 से 900 मिग्रा. तक विटामिन 'सी' व 1.2 मिग्रा. लोहा मिलता है। यह फल पेक्टीन का भी प्रचुर स्रोत है। आंवले में पाया जाने वाला विटामिन 'सी' हमारी नेत्र जराव्याधि नाशक, त्रिदोषहर और अत्यंत धातु पोषक होता है। शरीर को शक्तिशाली व युवा बनाए रखने में आंवला काफी उपयोगी है।

स्कंध पुराण, गरुड़पुराण में आंवले की महिमा का विशद वर्णन मिलता है। हमारे ऋषि-मुनि आंवले के गुणों से अच्छी तरह परिचित थे। महर्षि च्यवन ने पुन: युवा होने के लिये आंवले से बने योग का प्रयोग किया था जो बाद में उन्हीं के नाम पर 'च्यवनप्राश' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

आंवला एक, लाभ अनेक

आंवले के सेवन से 'स्कर्वी' रोग की रोकथाम की जा सकती है। आंवला अस्थमा और फेफड़े के रोगियों को दिया गया तो उन्हें बहुत लाभ हुआ। आयुर्वेद चिकित्सा में यह एक महत्वपूर्ण फल है। सूखा आंवला रक्तस्राव प्रवाहिका और पेचिश में काफी लाभ करता है। इसका रस आंखों के सूजन को भी कम करता है तथा शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाता है। इसके फल को लिखने की स्याही और खिजाब बनाने में भी प्रयुक्त किया जाता है।

आंवला नेत्रों की ज्योति, फेफड़े, सिर के केश, मसूढ़े, दांत, त्वचा और रक्त व वीर्य के लिये बेजोड़ पोषण करने वाला होता है। स्वप्नदोष रोग से ग्रसित व्यक्ति को सूखे आंवला का चूर्ण 10 ग्राम, व 20 ग्राम चीनी मिलाकर दोनों समय एक गिलास पानी के साथ सेवन करने से काफी लाभ होता है। आंवले की 2-3 ग्राम पत्तियां पीसकर उसमें गुड़ मिलाकर तीनों समय चाटने से खूनी पेचिश ठीक हो जाती है।

आंवला 4 भाग, बहेड़ा 1 भाग, हरड़ 2 भाग (सब गुठली रहित) लेकर चूर्ण बना

लें। एक से चार चम्मच तक यह चूर्ण केवल देशी घी के साथ प्रतिदिन सुबह-शाम सेवन करने या घी और शहद (विषम मात्रा में) के साथ सेवन करने से नेत्र दृष्टि बढ़ती है, आंखें सबल होती हैं।

सूखा आंवला (गुठली रहित) 500 ग्राम, सोंठ 100 ग्राम, असगंध 300 ग्राम को पीसकर चूर्ण बनाकर उसमें 400 ग्राम पिसी मिश्री मिला दें 6 चम्मच चूर्ण का (बच्चों को 1 से 2 चम्मच) प्रात: दूध या जल के साथ सेवन करें। यह छात्रों व बुद्धिजीवियों के लिये अमृततुल्य है। यह स्नायु शक्तिवर्धक, वीर्यवर्धक होने के साथ-साथ श्वेत प्रदर, कटिशूल, प्रमेह, शारीरिक दुर्बलता पिंडलियों में दर्द आदि रोगों को दूर करने वाला होता है।

हाथ व पैरों में पसीना या जलन होने पर आंवला चूर्ण व शहद 3-3 चम्मच चाटें या जल के साथ दोनों समय सेवन करें, साथ ही साथ आंवले के पानी से हाथ-पैर को दिन में तीन-चार बार धोएं काफी आराम मिलेगा।

आंवला और त्रिफला

जिस प्रकार देवताओं में ब्रह्म, विष्णु व महेश हैं, वैसे ही आयुर्वेद में आंवला, बहेड़ा व हरड़ की कीर्ति है। इन्हीं तीनों को मिलाकर अमृततुल्य त्रिफला चूर्ण तैयार किया जाता है। जिसे आयुर्वेद ने सभी रोगों को दूर करने वाला बताया है। आंवला, हरड़ व बहेड़ा तीनों सम मात्रा में कूट-पीसकर दोनों समय पानी या दूध के साथ सेवन करना आयुर्वेदानुसार बहुत गुणकारी होता है।

आंवले की खट्टी-मीठी चटनी

दाल पकाते समय इसी में एक साबुत ताज़ा आंवला डाल दीजिये, दाल पकने के बाद आंवला निकाल कर उसमें इच्छानुसार थोड़ा-सा नमक या गुड़ डालकर मसल दीजिए और लीजिए भोजन के साथ खट्टी व मीठी चटनी का आनंद व साथ में विटामिन 'सी' भी। जब तक बाज़ार में ताज़ा आंवला मिलता रहे इसका सेवन आराम से किया जा सकता है।

आंवले का मुरब्बा

आंवले का सेवन अधिकांश लोग मुरब्बा बनाकर भी करते हैं, तो आइये देखते हैं कि कैसे बनता है आंवले का मुरब्बा। बिना चोट खाए अच्छी तरह से पके हुए (फरवरी-मार्च महीने के आंवले) आंवले में नुकीले लकड़ी या कांटे से छिद्र करें। फिर इन्हें चूने या फिटकिरी के पानी में भिगो दें (50 ग्राम चूना ढाई लीटर पानी में भिगोकर 3-4 बार हिला दें। जब चूना बैठ जाए तो स्वच्छ जल को आहिस्ता से निकाल लें यही चूने का पानी है)। आंवलों को 15 घंटे तक इस पानी में भिगोना चाहिए उसके बाद खौलते हुए पानी के भाप से इन आंवलों को कुछ देर तक पका लें (आंवला फटने न पाए) फिर पके आंवले को धूप में कुछ देर सुखा लें। अब चीनी की चार तार वाली चाशनी तैयार करें, उसी में आंवले डुबोकर रख दें। 15-20 दिन बाद मुरब्बा तैयार हो जाएगा। यह मुरब्बा शीतल, रोचक, दाहशामक, पाचक, पोषक, दीपन, पित्तनाशक होता है। एक-दो आंवला सुबह-शाम खाना स्वास्थ्य के लिये बहुत हितकर होता है।

आंवले की बड़ी

जब आंवला पक जाए तो इसकी बड़ी बनाकर रखा जा सकता है। हरे, पके आंवले को लेकर उसे थोड़े पानी में उबाल लें, उबलने के बाद उस आंवले को निकालकर मसल डालें। यदि उबला आंवला एक किग्रा. हो तो उसमें सोंठ, छोटी पीपल, काली मिर्च छह-छह ग्राम व सौंफ, धनिया व जीरा 10-10 ग्राम हल्का-सा भूनकर व सैंधव व काला नमक 20 ग्राम मिलाकर खूब महीन पीसकर मसले हुए आंवले में मिलाकर बड़ी की तरह डालकर धूप में सूखा लें। इच्छानुसार दो-तीन बड़ी मुंह में डालकर चूसते हुए पूरे साल लीजिए आंवले का नमकीन जायका।

आंवले में अंडे से कई गुना अधिक पौष्टिकता होती है। साथ ही अंडे के दुर्गुण इसमें नहीं होते (आंवला दोष रहित अमृत है)। अत: स्वस्थ रहने के लिये हमेशा आंवले का सेवन करें। ❑

(पृष्ठ 45 का शेषांश)

है। अत: मोतियाबिंद के रोगी को ऑपरेशन कराने में लापरवाही नहीं बरतनी चाहिए।

रोग

बीमारी की हालत में हमें नेत्रों की सुरक्षा का विशेष ध्यान रखना चाहिए। अनेक रोगी लापरवाही करके अपने नेत्रों की ज्योति खो बैठते हैं। चेचक की बीमारी में भी अनेक व्यक्ति अंधे हो जाते थे। यह प्रसन्नता की बात है कि इस ख़तरनाक बीमारी का देश से उन्मूलन हो गया है।

मानसिक तनाव

मानसिक तनाव का सबसे अधिक और गंभीर प्रभाव आंखों पर पड़ता है। जब कोई मानसिक परेशानी होती है तब मन का दुख आंखों में उतर आता है फलस्वरूप आंखों में चमक के स्थान पर मलिनता झलकने लगती है। अवसाद की छाया बारबार पड़ने से आंखों में धुंधलापन छाने लगता है। अधिक मानसिक तनाव के कारण नींद नहीं आती, नींद पूरी न होने के कारण आंखों के नीचे काले घेरे बन जाते हैं। कभी-कभी मानसिक तनाव का इतना भयंकर परिणाम होता है कि नेत्रों की ज्योति चली जाती है।

नेत्रदान

हमारी मृत्यु के बाद हमारे नेत्र यदि किसी अंधे को नेत्र ज्योति प्रदान करते हैं तो हमारे लिये इससे अच्छा पुण्य कार्य क्या हो सकता है। मृत्यु के बाद कुछ समय तक नेत्रों की ज्योति नष्ट नहीं होती। इस दौरान पहले से नेत्रदान किए हुए व्यक्ति के नेत्र को निकालकर चिकित्सक किसी अंधे का अंधापन दूर करने के काम में लाते हैं। एक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि अंधों में एक चौथाई अंधे ऐसे हैं जिन्हें दूसरे का नेत्र लगाकर नेत्र ज्योति प्रदान की जा सकती है।

ऊपर वर्णित उपायों के प्रयोग तथा प्रचार-प्रसार के माध्यम से बहुत से मामलों में अंधापन दूर किया जा सकता है। इस कार्य की सफलता के लिये सरकार का, समाजसेवी संस्थाओं एवं व्यक्तियों का तथा हम सबका सहयोग अपेक्षित है। ❑

रोज़गार समाचार

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठान/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/रेलवे भर्ती बोर्ड/सशस्त्र सेनाओं/बैंकों में रोज़गार तलाश रहे हैं ?

रोज़गार समाचार पढ़ें और नवीनतम जानकारी प्राप्त करें।

रोज़गार समाचार खरीदें और अनेक रोज़गार के अवसरों/दाखिलों/नतीजों की जानकारी प्राप्त करें।

रोज़गार संबंधी अपने प्रश्नों के उत्तर व अधिक जानकारी के लिए हमारी वेबसाइट भी देखें : www.employmentnews.gov.in

रोज़गार समाचार

एनिमेशन-रोज़गार का नया सोपान

न्याय प्रकिया में फोरेंसिक विज्ञान की भूमिका

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें :

रोज़गार समाचार

ईस्ट ब्लाक-4, लेवल-5, आर.के. पुरम, नई दिल्ली

फोन-26174975, 26175516

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

भारत सरकार

मानवाधिकारों पर गंभीर चर्चा

○ निर्भय कुमार

पत्रिका : मानवाधिकार : नई दिशाएं (वार्षिकांक 3); **संपादन** : अरुणा शर्मा एवं सरोज कु. शुक्ल; **प्रकाशक** : राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, नयी दिल्ली; **वर्ष** : 2006; **पृष्ठ सं.** : 228; नि:शुल्क

लोकतांत्रिक व्यवस्था का मूल है सब को समानता का अवसर और यहीं से बात उठती है मानवाधिकार की। भारत जैसे विकासशील देश में मानवाधिकार और इस दिशा में हो रहे कार्य शुरुआती सफ़र में हैं, लेकिन राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कहीं न कहीं हर व्यक्ति के लिये कार्यरत है। *मानवाधिकार : नई दिशाएं* राष्ट्रीय मानव अधिकर आयोग का तीसरा वार्षिकांक है। इस वार्षिकांक में न सिर्फ आयोग के कार्यों, प्रयासों और प्रयासों से मिले सकारात्मक परिणामों को दर्शाया गया है बल्कि नये विषयों के चयन से इसके क्षेत्र को व्यापक बनाने की कोशिश की गई है। इस अंक में न केवल सूचना, पर्यावरण, शिशु, महिला स्वास्थ्य जैसे विषयों को समाहित किया गया है, बल्कि मीडिया, इतिहास और दर्शन पर भी प्रासंगिक विचार प्रस्तुत किए गए हैं।

वार्षिकांक मुख्य रूप से तीन खंडों में विभाजित है। पहले खंड में लेख, दूसरे में आयोग के निर्णय और तीसरे खंड में पुस्तक समीक्षा है। लेखों की संख्या 18 है। पहले लेख का विषय रखा गया है भ्रष्टाचार : सुशासन और मानवाधिकार के लिये ख़तरा। इस लेख में यह कहना कि आज हम शिक्षित होते हुए भी अपने मौलिक अधिकारों का उपयोग नहीं कर रहे और भ्रटाचार को चुपचाप सहन करते जा रहे हैं; न केवल सहन कर रहे हैं, बल्कि कहा जाए कि हम भी भ्रष्टाचार का हिस्सा बनते जा रहे हैं, वर्तमान परिस्थितियों पर सही और सजग चोट है। लेख में यूएनडीपी के आंकड़ों के माध्यम से भारतीय समाज और इसमें संसाधनों के वितरण का मौलिक खाका भी खींचा गया है।

न्यायमूर्ति ए.पी. मिश्रा ने वर्तमान भारतीय दांडिक न्याय व्यवस्था में सुधार एवं सुझाव को अपना विषय बनाया है। लेखक की मान्यता है कि मनुष्य स्वभाव से शांतिचित्त होता है, लेकिन इंद्रियों पर नियंत्रण न रख पाने के कारण वह दूसरे के अधिकारों का हनन करना शुरू कर देता है। वातावरण को दूषित होने से बचाने का दायित्व वैसे तो पूरे समाज का है, लेकिन सरकार द्वारा नागरिकों की उपेक्षा इसके विस्तार का प्रबल कारण माना जाता है। लेख में दंड न्याय के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया है। लेखक ने भारत में न्याय प्रक्रिया में होने वाली देरी का अन्य देशों के साथ तुलनात्मक अध्ययन भी पेश किया है।

प्रोफेसर गिरीश्वर मिश्र ने सूचना के अधिकार जैसे ज्वलंत मुद्दे पर विचार किया है। लेखक के अनुसार सूचना के आधार पर समाज में संवेदनशीलता, सक्रियता और विकास कार्यों में भागीदारी बढ़ती है। श्री मिश्र ने निजी संस्थाओं को भी सार्वजनिक निगरानी में लाए जाने का विचार व्यक्त किया है। 'जनतंत्र की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि जनता के प्रतिनिधि अपने आचरण का दायित्व स्वीकार करें' जैसी पंक्तियों से लेखक ने दायित्व से भागने वाले जन प्रतिनिधियों को आगाह भी किया है। पूरे लेख के द्वारा सूचना के अधिकार की परिधि और इसके अपवाद पर भी चर्चा की गई है।

बाल श्रम पर लेख भी महत्वपूर्ण और ज्वलंत है। देश में बाल श्रम की स्थिति और इसके उन्मूलन को लेकर सरकारी कानूनों और प्रयासों को इस लेख के केंद्र में रखा गया है। विजय नारायण त्रिपाठी का लेख उच्चतम न्यायालय और मानव अधिकार पर है। इस लेख के माध्यम से लेखक ने यह प्रकाश डाला है कि न्यायिक सक्रियता की वजह से मानवाधिकारों के प्रति किस प्रकार नयी जागरुकता पैदा हुई है। इस संबंध में टिहरी बांध परियोजना समेत कई उदाहरण पेश किए गए हैं।

महिला अधिकार एवं सशक्तीकरण से संबंधित विषयों पर ज़ोर इस वार्षिकांक की एक महत्वपूर्ण खासियत है। महिला विमर्श के इस दौर में मानव अधिकारों की तलाश में बालिका शिशु, 21वीं सदी में महिला अधिकारों एवं सशक्तीकरण के बढ़ते आयाम और स्त्री एवं मानवाधिकार जैसे लेख काफी उल्लेखनीय हैं, विशेषतौर पर मानव अधिकारों की तलाश में बालिका शिशु। पहले ही अनुच्छेद में निशी अग्रवाल द्वारा ब्रिटिश मेडिकल जनरल लेंसेट के आंकड़ों के माध्यम से यह उद्घाटन कि दो दशक में भारत में एक करोड़ कन्या भ्रूणों की हत्या की जा चुकी है, दिल दहलाने वाला है। इस लेख में आंकड़ों के साथ-साथ उन सामाजिक कारणों और परिस्थितियों को भी उजागर किया गया है जिनके कारण ऐसा हो रहा है, जैसे पुत्र इच्छा की परंपरा। बालिकाओं की घटती संख्या के प्रभावों को भी प्रभावशाली

तरीके से प्रस्तुत किया गया है। लेखिका ने एक स्थान पर शेखावटी क्षेत्र का उदाहरण दिया है जहां स्वैप व्यवस्था का प्रचलन इसी वजह से बढ़ रहा है।

इस अंक में जिन नये विषयों को जगह दी गई है उसमें पर्यावरण प्रबंधन, मानव अधिकार और मीडिया, मानवाधिकार के संदर्भ में संगीत की प्रासंगिकता जैसे विषय हैं। मानवाधिकारों को बढ़ाने में मीडिया की भूमिका का वर्णन 'मानव अधिकार और मीडिया' शीर्षक लेख के तहत किया गया है लेखक का यह कहना है कि व्यक्ति समुचित जानकारी के बिना अपना पक्ष और दृष्टिकोण तय नहीं कर सकता, सटीक है। उन्होंने मानवाधिकार को बढ़ाने में मीडिया की भूमिका की सराहना तो की है, लेकिन यह कह कर कि समाचार पत्रिकाओं सहित अधिकांश संचार माध्यमों पर हमारे देश में व्यवसायिकता और कैरियरिज्म हावी हो चुका है, वास्तविक स्थिति को भी उजागर किया है और मीडिया को अपना दायित्व याद दिलाने की कोशिश की है।

'मानसिक स्वास्थ्य का मुद्दा और राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग' शीर्षक लेख की चर्चा के बिना इस पत्रिका की चर्चा शायद अधूरी रह जाएगी। लेख में रांची, आगरा और ग्वालियर के मानसिक चिकित्सालयों में रहे रोगियों की न सिर्फ दशा पर प्रकाश डाला गया है बल्कि लेखक चमन लाल ने मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम, 1987 के विभिन्न पहलुओं पर भी चर्चा की है कि किस प्रकार इससे मानसिक रोगियों की स्थिति में बदलाव हो रहा है। उन्होंने अधिनियम की महत्वपूर्ण धारा 19 के दुरुपयोग पर भी प्रकाश डाला है। लेख के माध्यम से इस क्षेत्र में आयोग और न्यायपालिका की भूमिका को भी प्रकाशित किया गया है। उपर्युक्त लेखों के अलावा मानवाधिकारों की दिशा और दशा, राष्ट्रीय आंदोलन एवं संविधान की बहस के संदर्भ में मानव अधिकारों का बहुदर्शी आयाम, मानव अधिकार एवं अर्धसैनिक बल जैसे लेख भी अच्छे हैं।

पत्रिका के दूसरे खंड में आयोग के दो महत्वपूर्ण निर्णयों पर विस्तृत चर्चा है। पहले लेख में पंजाब में पुलिस द्वारा सामूहिक दाह संस्कार के लिये मुआवजा और दूसरे में उड़ीसा में भुखमरी से मौत को विषय बनाया गया है। यह अंक विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं, एनजीओ के साथ-साथ मौलिक अधिकारों के प्रति सजग होने की चाह रखने वाले आम जन के लिये भी उपयोगी है। ❑

(समीक्षक नवभारत टाइम्स से संबद्ध हैं)

सदस्यता कूपन

❑ नयी सदस्यता ❑ नवीकरण ❑ पता बदलने के लिये

(जो लागू होता हो उस पर '✓' का चिह्न लगाएं।)

मैं ..... (पत्रिका का नाम एवं भाषा) का ❑ वार्षिक (70 रुपये) ❑ द्विवार्षिक (135 रुपये) ❑ त्रिवार्षिक (190 रुपये) सदस्य बनने का इच्छुक हूं। डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या ..... तारीख .....

नाम .....

वर्ग ❑ विद्यार्थी ❑ शिक्षक ❑ संस्था ❑ अन्य

पता : .....

.....

.....

पिन .....

नवीकरण/पता बदलने के लिये कृपया अपनी सदस्य संख्या यहां लिखें [ ]

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर 'निदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवाएं और कूपन के साथ इस पते पर भेजें :

विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग

ईस्ट ब्लाक IV, लेवल VII, आर.के. पुरम, नयी दिल्ली-110066

दूरभाष : 26100207, 26105590

पहली प्रति की प्राप्ति हेतु आठ से दस हफ्ते का समय दें।

अथ संस्कृति जिज्ञासा

○ अंशु गुप्ता

पुस्तक का नाम : भारतीय संस्कृति में मानव अधिकार की अवधारणाएं; **संपादक** : सरोज कुमार शुक्ल; **प्रकाशक** : राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग; **मूल्य** : नि:शुल्क; **वर्ष** : 2006

विश्व में सदियों से इस विषय पर विवाद रहा है कि मानव अधिकारों की अवधारणा का उदय कहां से हुआ। कुछ विद्वानों का यह मत है कि भारत जैसे बहुलतावादी देश में अधिकार का नामोनिशान ही नहीं था। यहां तो केवल कर्तव्य का ही प्राधान्य था। यहां ऐसी मान्यता है कि भारत में अधिकार केवल राजा के होते थे, प्रजा के कोई अधिकार ही नहीं होते। पश्चिम में 'अधिकार' की अवधारणा का उदय मैग्नाकार्टा से हुआ। भारतीय दृष्टि में अधिकार और कर्तव्य एक सिक्के के दो पहलू हैं। बिना अधिकार के कर्तव्य का निर्धारण संभव नहीं है और न कर्तव्य के बिना अधिकर का। इन्हीं सब ऊहापोहों से गुज़रते हुए भारत के राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग ने भारतीय संस्कृति में मानव अधिकार की अवधारणाओं को लेकर एक नये सार्थक संवाद की पहल की है जो आज के युग के लिये न केवल प्रासंगिक है, अपितु भारत की अनेकतावादी पहचान को बनाए रखने के लिये अनिवार्य भी है।

प्रस्तुत पुस्तक में भारतीय परंपरा में व्यक्त वैचारिक संवादों को विभिन्न अधिकारी विद्वानों द्वारा दिए गए भाषणों को संकलित किया गया है। इन लेखों में जीवन की संपूर्णता का आभास तथा धर्मनिरपेक्षता की मूल आत्मा का निर्देशन देखने को मिला है साथ ही इसमें भारतीय साधना के नये पथ पर अग्रसर होने की बेचैनी भी दिखाई देती है।

संपूर्ण विश्व में भारत अपनी सांस्कृतिक अस्मिता और अलग पहचान के लिये विख्यात है। इस संस्कृति का एक पुरातन मंत्र है – *न दैन्यं न पलायनम्* – अर्थात् भागो नहीं दुनिया को बदलो। इन सबका विश्व में किसी भी संस्कृति में दर्शन दुर्लभ है। भारतीय संस्कृति की वैचारिक अस्मिता की विभिन्न धाराओं को एक साथ एक मंच पर ला कर आयोग ने एक नये युग का श्रीगणेश किया है। इससे जहां एक ओर भारत की विराट समन्वयकारी दृष्टि और मज़बूत होगी वहीं दूसरी ओर उसकी सांस्कृतिक स्मृति को नये उजाले में देखने की समझ बढ़ेगी। हमारे सभी धर्मग्रंथों में मनुष्य मात्र के प्रति परस्पर सद्भाव, परस्पर प्रेम और विश्वबंधुत्व का सर्वत्र स्वर सुनाई पड़ता है। चाहे *कुरान* हो, चाहे *बाइबिल*, चाहे *गुरुग्रंथ साहिब* सबमें *एकम् सद् विप्रा बहुधा वदन्ति* का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है, अर्थात ईश्वर एक है और उसको हम विभिन्न नामों से पुकारते हैं। जैन और बौद्ध धर्म भी हमें इसी बात का संदेश देते हैं कि हम सभी अलग होते हुए भी एक हैं हमारी मान्यताएं भी भिन्न-भिन्न होते हुए अभिन्न हैं और हमारे स्वर भी अनेक होते हुए एक हैं।

पुस्तक के प्रथम लेख 'मानव अधिकार की भारतीय संकल्पना, परिधि और प्रयोजन' में प्रो. गिरीश्वर मिश्र ने भारतीय संकल्पना की मूल दृष्टि की ओर हमारा ध्यान खींचा है। प्रो. प्रेम सुमन जैन के 'जैन धर्म में मानव अधिकार संरक्षण के सूत्र' लेख में यह तथ्य उजागर होकर सामने आता है कि जैन धर्म स्वातंत्र्य और आत्मविकास का समर्थक धर्म है। मदन गुप्त ने 'सार्वभौमिक भ्रातृत्व एवं मानव अधिकार की अवधारणा' लेख में भ्रातृत्व को मानवाधिकार का आधार बताया है। 'भारतीय संस्कृति में मानवाधिकार : एक विहंगम दृष्टि' लेख में सत्य नारायण साबत ने प्राचीन भारतीय संस्कृति से लेकर जैन धर्म, बौद्ध धर्म, इस्लाम धर्म के अतिरिक्त मध्ययुगीन चिंतन में मानवाधिकार, विभिन्न संप्रदायों में मानवाधिकार तथा गुरु नानक के चिंतन में मानवाधिकार की विस्तृत विवेचना प्रस्तुत की है। 'अशोक के धर्मलेखों में अभिव्यंजित बौद्ध धर्म में मानवाधिकार की अवधारणा' लेख में बुद्ध रश्मि मणि ने बताया है कि अशोक ने जिस धम्म का प्रचार किया वह किसी समूह, वर्ग अथवा संप्रदाय से कहीं ऊपर उठ कर अनुकरणीय आचरण था। 'ईसाई धर्म में मानव अधिकार की अवधारणा' लेख में एम.डी. थॉमस ने विविधता को सृष्टि की बुनियादी विशेषता स्वीकार किया है किंतु उस विविधता में भी तालमेल का होना परम आवश्यक माना है जिसमें अधिकार और कर्तव्य का संतुलन मूल तौर पर अहम है। प्रो. ए.एस. नारंग का लेख 'सिक्ख धर्म और मानव अधिकार' सिक्ख धर्म के उत्स और उसके मानवाधिकार संबंधी दार्शनिक पृष्ठ भूमि पर केंद्रित है। 'मानवाधिकार और कौटिल्य का अर्थशास्त्र : संकल्पनामूलक निर्वचन' लेख में नरेंद्र व्यास ने कौटिल्य के अर्थशास्त्र को केंद्र में रखकर मानवाधिकार की व्याख्या प्रस्तुत की है। 'लोक और शास्त्र में मानवाधिकार' लेख में वागीश

शुक्ल ने लोक और उसके शास्त्र तथा प्रकृति की परस्परता की बात स्पष्ट करते हुए मानवाधिकारों को व्याख्यायित किया है। 'लिंग, न्याय और मानवाधिकार' लेख में अनिल दत्त मिश्र एवं शगुन अग्रवाल का कहना है कि आज मानवाधिकार का सबसे ज्वलंत मुद्दा लिंग न्याय से संबंधित है और यह इसलिये भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है क्योंकि महिलाएं दोहरे रूप से शोषित होती हैं। 'भारतीय संदर्भ में मानवाधिकारों के सिद्धांत पर पुनर्विचार' लेख में महेंद्र पाल सिंह ने कहा है कि आयोग को केवल मानवाधिकार के हनन को ही अपना लक्ष्य नहीं मानना चाहिए अपितु उन कारणों की तह तक जाना चाहिए जिनके कारण यह समस्याएं पैदा होती हैं। 'मानव अधिकारों के प्रति शैक्षिक दायित्व एवं स्कूली शिक्षा की अपेक्षाएं एवं चुनौतियां' लेख में लक्ष्मी सिंह का कहना है कि व्यक्ति के समस्त विकारों को शिक्षा से ही दूर किया जा सकता है और इसका क्रियान्वयन प्रारंभिक शिक्षा लागू कर ही किया जा सकता है। 'आधुनिक भारतीय शिक्षा में निहित मनुष्य की अवधारणा का आशय' लेख में दिनेश कुमार शर्मा ने परंपरागत शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया है जिसमें व्यक्ति के सर्वांगीण विकास की बात निहित है। 'शिक्षा का अधिकार : दशा एवं दिशा' लेख में स्वरूपमा चतुर्वेदी ने विद्या अर्थात शिक्षा को मनुष्य का सर्वश्रेष्ठ सौंदर्य स्वीकार किया है।

भारत में आयोग का गठन अभी हाल की घटना माना जा सकता है लेकिन इतनी अल्प अवधि में उसने भारत जैसे परंपरावादी समाज में अपनी एक खास पहचान बना ली है और इसके सतर्क हस्तक्षेप के कई उदाहरण समकालीन विश्व व समाज में मौजूद हैं। अत: यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि इसकी स्थापना से शोषितों का एक बहुत बड़ा तबका राहत की सांस ले रहा है। आयोग जहां एक ओर समाज में सदियों से व्याप्त कुरीतियों को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिये कृतसंकल्प है वहीं दूसरी ओर भारतीय वाङ्मय एवं उसके महत्वपूर्ण धर्मों के गूढ़ यथार्थ को अकादमिक क्षेत्र से जुड़े विद्वानों, बुद्धिजीवियों, मीडिया-कर्मियों, गैरसरकारी संगठनों के विशिष्ट प्रतिनिधियों के साथ विचार-विमर्श व संवाद से आमजन की भाषा में परोसने का प्रयास कर रहा है। इस प्रकार के अकादमिक पहल से हम आशा कर सकते हैं कि भारतीय समाज की भावी पीढ़ी न केवल लाभान्वित होगी अपितु उसके गूढ़ रहस्यों से परिचित भी हो सकेगी। आयोग के इस कदम का स्वागत किया जाना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक का आवरण एवं छपाई आकर्षक है। वर्तनी की अशुद्धियां नहीं के बराबर हैं। भाषा शैली दुरुह होते हुए भी आम आदमी के लिये सहज एवं सुबोध है। ❑

(समीक्षक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

विशिष्ट महिला पंचायत प्रतिनिधि पुरस्कार

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज

8, नेलसन मंडेला रोड, वसंत कुंज, नई दिल्ली-110070
दूरभाष : 26121902, 26121909 फैक्स : 26137027
ई-मेल : issnd@vsnl.com

इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज द्वारा 24 अप्रैल 2007 को **महिला सशक्तीकरण दिवस समारोह** दिल्ली में मनाया जायेगा। इस सिलसिले में **विशिष्ट महिला पंचायत प्रतिनिधि पुरस्कारों** के लिए नामांकन पत्र आमंत्रित हैं। वर्ष 2007 के समारोह का विषय *एचआईवी और एड्स, महिलाएँ और पंचायतों की भूमिका* है। ये पुरस्कार महिला पंचायत प्रतिनिधियों को सार्वजनिक जीवन की समृद्धि एवं पंचायतों के विकास में उनके योगदान के लिए 24 अप्रैल 2007 को नई दिल्ली में दिए जाएँगे। इस संबंध में विस्तृत जानकारी के लिए कृपया *डॉ. विद्युत महांति, इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज, नई दिल्ली* से संपर्क करें। नामांकन पत्र जमा करने की *अंतिम तिथि 30 मार्च 2007* है।

YH/2/7/04

RAU'S IAS

A name that Nation trusts

Amazing Success

Our 2005 Exam Results : Nine positions secured by our students in first 20 and 49 in first 100 with overall 203 total selections. As regards the past achievements, Study Circle has contributed nearly one-third of the total selections done for Civil Services by UPSC since 1953.

It is a well known fact that Rau's is the most trusted and recommended name all over the country for IAS & PCS coaching.

Unbeatable Strategy

Answers that matter : The most crucial fact about coaching is that it should improve the quality of your answers in the minimum possible time. It is precisely this training on which we focus on at Rau's to give an extra edge to the answers you give / write in the Civil Services Examination.

Be Sure

We have no branches or associates any where in India except Jaipur. Our name which has become a legend among students for the highest standards in teaching, and hence has been copied by a lot of people across India, but no one can match our quality.

Programme Highlights

Civil Services/PCS Exam - 2007 & Judicial Services Exam - 2007

- Personal Guidance (English Medium) is available for -
  General Studies/ Essay, History, Sociology, Public Administration, Geography, Psychology, Law & Commerce.
- पर्सनल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  सामान्य अध्ययन / निबंध, इतिहास, भूगोल, समाजशास्त्र एवं लोक प्रशासन में उपलब्ध।
- Postal Guidance in English Medium available for -
  General Studies, History, Sociology, Public Administration and Geography.
- पोस्टल गाइडेंस (हिन्दी माध्यम) -
  केवल सामान्य अध्ययन, भारतीय इतिहास एवं भूगोल में उपलब्ध।
- Hostel facility arranged.

कोई भी लक्ष्य बड़ा नहीं ।
जीता वही जो डरा नहीं ।।

If you are taught by the stars, sky is the limit.

Contact personally or write for prospectus with a DD/MO of Rs. 50/- favouring

RAU'S IAS STUDY CIRCLE

Head Office : 309, Kanchanjunga Bldg., 18, Barakhamba Road, Connaught Place, New Delhi-110001
Phone : 23738906-07, 23318135-36, 32448880-81, 65391202, Fax: 23317153

Jaipur Centre : 701, Apex Mall, Lal Kothi, Tonk Road, Jaipur - 302015, Ph.: 0141-6450676, 3226167, 9351528027

For full details on fast-track log-on our website: www.rauias.com

The Original Rau's / Rao's - Since 1953

YH-12/6/02

प्रकाशक व मुद्रक वीणा जैन, निदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, डब्ल्यू-30, ओखला औद्योगिक क्षेत्र फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कांप्लेक्स, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। कार्यकारी संपादक : राकेशरेणु

Licenced under U (DN)-05/2006-08
रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2006-08 तथा डाक व्यय की पूर्व अदायगी के बिना डाक में डालने के लिए लाइसेंस–प्राप्त पंजी सं. 951/57
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2006-08 Licenced to post without pre-payment at RMS, Delhi. R.N. 951/57

Just Released

सिविल सर्विसिज (प्रा.) परीक्षा की तैयारी हेतु

उपकार की उपयोगी पुस्तकें

Code 8 Rs. 280.00

Code 1322 Rs. 230.00

Code 169 Rs. 245.00

Code 669 Rs. 300.00

Code 272 Rs. 235.00

Code 236 Rs. 265.00

Code 140 Rs. 485.00

Code 1065 Rs. 465.00

Code 1169 Rs. 185.00

Code 9 Rs. 350.00

Code 170 Rs. 140.00

Code 172 Rs. 125.00

उपकार प्रकाशन 2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा-282 002 फोन : 2531101, 2530966, 3208693/94; फैक्स : (0562) 2531940
(An ISO 9001:2000 Company) • E-mail : info@upkarprakashan.com • Website : www.upkarprakashan.com
ब्रांच ऑफिस : 4840/24, गोविन्द लेन, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2, फोन : 23251844/66

YH-2/7/01